Con. 3. VII. 22. 48
350

अंक 7
संख्या 22

बुधवार,
8 दिसम्बर
सन् 1948 ई.

भारतीय विधान-परिषद्

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

प्रतिज्ञा-ग्रहण तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर

विधान का मसौदा-(जारी)..... 1451-1517

[अनुच्छेद 23 पर विचार]

भारतीय विधान-परिषद्

बुधवार, 8 दिसम्बर, सन् 1948 ई.

भारतीय विधान-परिषद् कांस्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रातः दस बजे समवेत् हुई। उपाध्यक्ष महोदय (डॉ. एच.सी. मुकर्जी) अध्यक्ष पद पर आसीन थे।

प्रतिज्ञा-ग्रहण तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर

निम्नलिखित सदस्यों ने प्रतिज्ञा-ग्रहण की और रजिस्टर पर हस्ताक्षर किये:

श्री माणिक्य लाल वर्मा (संयुक्त-राज्य, राजस्थान)

श्री गोकुल लाल असावा (संयुक्त-राज्य, राजस्थान)

विधान का मसौदा-(जारी)

अनुच्छेद 23-(जारी)

***उपाध्यक्ष** (डॉ. एच.सी. मुकर्जी): अब हम अनुच्छेद 23 पर आगे विचार आरम्भ करते हैं। उस पर दो संशोधन उपस्थित किये गये हैं। संशोधन संख्या 677 राष्ट्र-भाषा तथा राष्ट्र-लिपि के सम्बन्ध में है और इसलिये उसे स्थगित किया जाता है। संशोधन संख्या 678, 679, 680 और 681 (पहला भाग) का आशय समान है। इसलिये उन पर एक साथ विचार किया जायेगा। मैं संशोधन संख्या 678 को उपस्थित करने की आज्ञा दे सकता हूं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बई : जनरल): श्रीमान्, मैं यह उपस्थित करता हूं कि :

"अनुच्छेद 23 के खण्ड (1) में 'script and culture' (लिपि और

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

संस्कृति) शब्दों के स्थान में 'script or culture' (लिपि अथवा संस्कृति) शब्द रखे जायें।"

केवल इस परिवर्तन का सुझाव रखा गया है कि 'और' के स्थान में 'अथवा' शब्द रख दिया जाये। इस परिवर्तन की आवश्यकता इतनी स्पष्ट है कि मेरे विचार से मुझे इस सम्बन्ध में कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है।

***उपाध्यक्ष:** इस संशोधन पर एक संशोधन है—सूची एक का संशोधन संख्या 25—जो मि. नज़ीरुद्दीन अहमद के नाम से है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल: मुस्लिम): उपाध्यक्ष महोदय, मैं यह उपस्थित करता हूं कि:

"संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 678 के सम्बन्ध में अनुच्छेद 23 के खण्ड (1) में 'residing in the territory of India or any part thereof' (भारत के राज्य-क्षेत्र अथवा उसके किसी भाग के निवासी) शब्दों के स्थान में 'residing in any part of the territory of India' (भारत के राज्य-क्षेत्र के किसी भाग के निवासी) शब्द रखे जायें।"

यदि 'अथवा उसके किसी भाग' वाक्यांश को पूरे वाक्य में स्थान दिया जाये तो वह इस प्रकार हो जाता है—'भारत के पूरे राज्य-क्षेत्र अथवा उसके किसी भाग के निवासी नागरिकों के किसी वर्ग...'। मेरा यह निवेदन है कि नागरिकों को कोई वर्ग भारत के पूरे राज्य-क्षेत्र में निवास नहीं कर सकता। वह अवश्य ही भारत के किसी भाग में निवास करेगा। इसलिये ये शब्द अर्थात् 'भारत के राज्य-क्षेत्र अथवा उसके किसी भाग के निवासी' अनुपयुक्त होंगे और उनसे मिथ्या अर्थ-बोध होगा। मेरा यह निवेदन है कि यदि हम 'भारत के राज्य-क्षेत्र के किसी भाग के निवासी' शब्द रखें तो ये पर्याप्त होंगे। सम्भवत: इस प्रसंग में यह शब्दावली अनजाने में प्रयुक्त हो गई है। इससे यह तर्कहीन अथवा मिथ्याबोध होता है कि कुछ लोग अथवा नागरिकों का कोई समूह सम्भवत: सारे भारत में निवास कर सकता है। इसके अतिरिक्त भारत के किसी भाग के सम्बन्ध में इस अनुच्छेद

में जो प्रतिबन्ध रखे गये हैं अर्थात् 'जिनकी अपनी विशेष भाषा, लिपि और संस्कृति है' से भी इसका उद्देश्य भारत के किसी भाग तक ही सीमित हो जाता है।

***उपाध्यक्षः** संशोधन संख्या 679 ।

***श्री एच.वी. कामत** (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): डॉ. अम्बेडकर ने मुझसे पहले ही बाजी मार ली है। इसलिये मैं संशोधन संख्या 679 को उपस्थित नहीं करता।

***उपाध्यक्षः** क्या आप संशोधन संख्या 680 को उपस्थित करना चाहते हैं?

***मोहम्मद इस्माइल साहब** (मद्रास : मुस्लिम): जी हां।

***उपाध्यक्षः** क्या आप यह चाहते हैं कि संशोधन संख्या 681 के पहले भाग पर मत लिया जाये?

***प्रोफेसर के.टी. शाह** (बिहार : जनरल): पहला भाग डा. अम्बेडकर के संशोधन में आ जाता है। परन्तु मैं दूसरे भाग को उपस्थित करना चाहता हूं।

***उपाध्यक्षः** संशोधन संख्या 681 का दूसरा भाग अब उपस्थित किया जा सकता है।

***प्रोफेसर के.टी. शाहः** श्रीमान्, मैं अपने संशोधन का भाग (2) उपस्थित करता हूं जो इस प्रकार है:

"अनुच्छेद 23 के खण्ड (1) में 'conserve' (समारक्षण) शब्द के बाद 'develop' (समुन्नत करने) शब्द रखे जायें।"

संशोधित खण्ड इस प्रकार हो जायेगा :

"भारत के राज्य-क्षेत्र अथवा उसके किसी भाग के निवासी नागरिकों के किसी वर्ग को, जिनकी अपनी विशेष भाषा, लिपि और संस्कृति है, इनके समारक्षण तथा इनको समुन्नत करने का अधिकार होगा।"

[प्रो के.टी. शाह]

श्रीमान्, मैं मनुष्यों की संस्कृति तथा मनुष्यों के किसी वर्ग की संस्कृति को गतिशून्य नहीं मानता किन्तु उसे गतिशील तथा उन्नतिशील समझता हूं। इसलिये मेरे विचार से किसी अवसर पर भी उसके समारक्षण से अधिक उसकी समुन्नति का महत्त्व है। इसके अतिरिक्त किसी देश अथवा सम्प्रदाय की संस्कृति उसकी लिपि अथवा भाषा से कहीं अधिक विस्तृत तथा गहन होती है। मैं इसे बताऊंगा। इसी कारण मैंने यह संशोधन उपस्थित किया है।

देश के लोगों के विभिन्न वर्गों की भाषाओं के सम्बन्ध में मुझे यह कहना है कि कुछ वर्षों में विशेषतया पिछली दो या तीन पीढ़ियों में वे इतनी समुन्नत और परिमार्जित हो गई हैं कि मेरे विचार से उनमें से कई भाषाएं किसी भी श्रेणी की शिक्षा की माध्यम हो सकती हैं, यहां तक कि विश्वविद्यालय में भी उनके द्वारा शिक्षा दी जा सकती है। किन्तु उन्हें और भी समुन्नत बनाया जा सकता है। उनका अधिक अध्ययन होगा चाहिये तथा उन्हें अधिक समुन्नत तथा विस्तृत बनाया जाना चाहिये ताकि वे अभिव्यक्ति और परस्पर व्यवहार तथा शिक्षा के लिये आज से कहीं अधिक प्रभावशाली माध्यम हो सकें। इसलिये मेरे मतानुसार यदि आप समारक्षण का अधिकार देते हैं तो आपको उसकी समुन्नति, उसकी प्रगतिशील उन्नति तथा प्रसार का भी अधिकार प्रदान करना चाहिये।

संस्कृति के सम्बन्ध में मेरा यह विचार है कि वह किसी विशेष प्रदेश, भाषा अथवा लिपि की समस्या नहीं है। वह एक वृहत् सागर है जिसके गर्भ में किसी सम्प्रदाय की भौतिक तथा आध्यात्मिक सभी निधियां स्थित रहती हैं। चाहे हम कला-कौशल पर दृष्टिपात करें अथवा ज्ञान, विज्ञान, धर्म और दर्शन पर, संस्कृति में ये सब सन्निहित हैं और इनके अतिरिक्त भी बहुत कुछ सन्निहित है। इस प्रकार वह प्रगतिशील है। उसे उन्नतिशील तथा सजीव समझना चाहिये। इसलिये यदि आप मूलाधिकारों में इस प्रावधान को अर्थात् समारक्षण के प्रावधान को स्थान देते हैं, चाहे उस पर किसी प्रकार के आघात का अथवा उसके संकट में पड़ने का भय उपस्थित हो अथवा नहीं, तो मुझे इसके लिये कोई कारण नहीं दिखाई देता कि उसके साथ आप समुन्नति का भी अधिकार क्यों न दें। इसीलिये मैंने यह सुझाव रखा है कि समुन्नति के अधिकार को भी स्थान दिया जाना चाहिये।

किसी सम्प्रदाय के समारक्षण के अधिकार के साथ ही उसकी समुन्नति का अधिकार भी होना चाहिये।

यदि आप इस संशोधन पर आघात करते हैं और इसे गिरा देते हैं तो इससे खण्ड के शेष भाग का भी अर्थात् गतिशून्य स्थिति के समारक्षण का भी निराकरण हो जाता है। परन्तु समुन्नति गतिशील तथा प्रगतिशील होती है और इसलिये उसे इस विधान के मसौदाकारों तथा संचालकों को स्वीकार करना चाहिये।

***उपाध्यक्ष:** अब हम संशोधन संख्या 682 पर आते हैं जो सेठ गोविन्द दास के नाम से है, परन्तु मेरे विचार से इसे स्थगित किया जाना चाहिये क्योंकि इसका सम्बन्ध राष्ट्रभाषा और राष्ट्रलिपि से है।

अब हम संशोधन संख्या 683 पर आते हैं।

(संशोधन संख्या 683 उपस्थित नहीं किया गया।)

चूंकि संशोधन संख्या 683 उपस्थित नहीं किया गया है इसलिए सूची 3 के संशोधन संख्या 52 के उपस्थित किये जाने की आज्ञा नहीं दी जाती। इसके बाद संशोधन संख्या 684 आता है जो पार्लकीमेडी के महाराजा के नाम से है। वे अनुपस्थित हैं।

(संशोधन संख्या 684 उपस्थित नहीं किया गया।)

संशोधन संख्या 685, जो श्री अलगूराय शास्त्री के नाम से है।

***श्री अलगू राय शास्त्री** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): श्रीमान्, मेरा संशोधन अनुच्छेद 24 के सम्पत्ति-सम्बन्धी खण्ड के बारे में है। मैं उसे उस समय उपस्थित करूंगा जब उस अनुच्छेद पर विचार होगा। उसका इस अनुच्छेद से कोई सम्बन्ध नहीं है। छापे की गलती से वह यहां पर आ गया है।

***उपाध्यक्ष:** तो क्या मैं यह समझूं कि आप उसे स्थगित रखना चाहते हैं?

***श्री अलगू राय शास्त्री:** उस पर यथा-स्थान विचार हो सकता है।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 686 भी श्री अलगूराय शास्त्री के नाम से है।

***श्री अलगू राय शास्त्री:** मैं उसे नहीं उपस्थित कर रहा हूं, परन्तु मैं उस पर कुछ विचार प्रकट करना चाहता हूं।

***उपाध्यक्ष:** आप यह सामान्य वादानुवाद के समय कर सकते हैं। अब मेरे सामने संशोधन संख्या 687 है जो प्रोफेसर एन.जी. रंगा और श्री अनन्तशयनम् आयंगर के नाम से है। इसके अतिरिक्त संशोधन संख्या 688 का पहला भाग है जो श्री जसपतराय कपूर के नाम से है और संशोधन संख्या 705 भी श्री जसपतराय कपूर के नाम से है। इन पर एक साथ विचार होगा क्योंकि इनका आशय समान है। मैं संशोधन संख्या 687 के उपस्थित किये जाने की आज्ञा दे सकता हूं।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर** (मद्रास : जनरल): श्रीमान्, मैं यह उपस्थित करना चाहता हूं कि:

> "अनुच्छेद 23 के खण्ड (2) में 'No minority' (किसी भी अल्पसंख्यक वर्ग) के स्थान में 'No citizen or minority' (किसी भी नागरिक अथवा अल्पसंख्यक वर्ग) शब्द रखे जायें।"

मैं यह चाहता हूं कि किसी भी सार्वजनिक शिक्षा-संस्था में सभी नागरिकों को समान रूप से अधिकार हो। यह अधिकार केवल अल्पसंख्यक वर्गों तक ही समिति न रहना चाहिये। इसी उद्देश्य से मैंने यह संशोधन उपस्थित किया है।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 687 के पहले भाग के सम्बन्ध में मैं जानना चाहता हूं कि क्या श्री कपूर यह चाहते हैं कि उस पर मत लिया जाये।

***पंडित ठाकुरदास भार्गव** (पूर्वी पंजाब : जनरल): परन्तु, श्रीमान्, संशोधन संख्या 687 पर मेरा एक संशोधन है जिसकी संख्या 26 है।

***उपाध्यक्ष:** जी हां। मैंने गलती की है। इन संशोधनों पर कुछ संशोधन हैं जिन्हें मैं एक-एक करके उठाऊंगा। एक संशोधन सूची 1 का संशोधन संख्या 26 है जो श्री टी. टी. कृष्णमाचारी और पं. ठाकुरदास भार्गव के नाम से है। श्री भार्गव, क्या आप उसे उपस्थित कर रहे हैं?

***पंडित ठाकुरदास भार्गवः** श्रीमान्, मैं यह उपस्थित करता हूं कि :

"अनुच्छेद 23 के खण्ड (2) के स्थान में निम्नलिखित रखा जाये:

'(2) No citizen shall be denied admission into any educational institution maintained by the State or receiving aid out of State funds on grounds only of religion, race, caste, language or any of them."

[(2) किसी नागरिक का, राज्य द्वारा संधृत अथवा राज्य-प्रणीवि से सहायता पाने वाले किसी शैक्षिक संस्था में प्रवेश केवल धर्म, प्रजाति, जाति और भाषा के कारणों से अथवा इनमें से किसी कारण से वर्जित न किया जायेगा।]

और अनुच्छेद 23 के उपखण्ड (क) और (ख) की अनुच्छेद 23-क के रूप में पुनर्गणना की जाये।

श्रीमान्, जिस खण्ड में संशोधन करने का प्रस्ताव किया गया है उसमें और इस संशोधन में तीन बातों के सम्बन्ध में अन्तर है। पहली बात तो यह है कि 'किसी भी अल्पसंख्यक-वर्ग' के स्थान में 'किसी नागरिक' शब्दों को रखने का प्रस्ताव है। दूसरी बात यह है कि इसमें केवल राज्य द्वारा संधृत संस्थाएं ही सम्मिलित नहीं हैं बल्कि राज्य-प्रणीवि से सहायता पाने वाली संस्थाएं भी सम्मिलित हैं। तीसरी बात यह है कि हमने 'धर्म, सम्प्रदाय अथवा भाषा' के स्थान में 'धर्म, प्रजाति, जाति और भाषा के कारणों से अथवा इनमें से किसी कारण से' शब्द रखे हैं।

श्रीमान्, 'किसी भी अल्पसंख्यक-वर्ग, शब्द रखने से अल्पसंख्यक-वर्ग और बहुसंख्यक-वर्ग में अन्तर किया गया है, परन्तु आप देखेंगे कि इस अध्याय का शीर्षक है 'सांस्कृतिक और शैक्षिक अधिकार'। इसलिये अल्पसंख्यकों के अधिकारों का इस खण्ड में उल्लेख न होना चाहिये। यदि हम खण्ड (2) को पढ़ें तो यह ज्ञात हो जायेगा कि इस खण्ड में अल्पसंख्यक-वर्ग को कुछ निश्चित अधिकार दिये गये हैं परन्तु राष्ट्रीय हितों की दृष्टि से इस सम्बन्ध में किसी बहुसंख्यक-वर्ग के प्रति भी विभेद न बरता जाना चाहिये। दुर्भाग्यवश कुछ बातों

[पं. ठाकुरदास भार्गव]

के सम्बन्ध में यह प्रवत्ति दिखाई देती है कि अल्पसंख्यकों के कुछ विशेष अधिकार हैं और वे अधिकार उनको दिये जाते हैं किन्तु ये अधिकार बहुसंख्यकों को नहीं दिये जाते। हमारे अंग्रेज़ प्रभुओं की यह आदत थी कि वे अल्पसंख्यकों और बहुसंख्यकों में इस प्रकार के विभेद उत्पन्न करना चाहते थे। कभी अल्पसंख्यक कहते थे कि यह विभेद उनके विरुद्ध है और अन्य अवसरों पर बहुसंख्यक भी यही अनुभव करते थे। इस संशोधन द्वारा बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक दोनों समान स्तर पर आ जाते हैं।

शिक्षा सम्बन्धी बातों के बारे में मेरी समझ में नहीं आता कि राष्ट्रीय दृष्टि से किसी भी विभेद का, चाहे उससे अल्पसंख्यकों को लाभ होता हो अथवा बहुसंख्यकों को, कैसे समर्थन किया जा सकता है। इसलिये इस संशोधन का उद्देश्य यही है कि अल्पसंख्यकों और बहुसंख्यकों को समान स्तर पर लाया जाये। जहां तक शिक्षा-संस्थाओं में प्रवेश का सम्बन्ध है किसी अल्पसंख्यक और बहुसंख्यक समुदाय के व्यक्तियों के बीच विभेद न बरता जायगा। इसलिये मेरा यह कहना है कि यह अल्पसंख्यक और बहुसंख्यक दोनों समुदायों के विद्यार्थियों के लिये एक स्वातन्त्र्य-पत्र है।

दूसरा परिवर्तन जो संशोधन द्वारा होगा वह उन संस्थाओं के सम्बन्ध में है, जिनका नियमन इस प्रावधान द्वारा होगा। जैसा कि यह प्रावधान है उसमें केवल राज्य द्वारा संधृत संस्थाएं सम्मिलित की गई हैं। इस संशोधन द्वारा ऐसी संस्थाओं को भी सम्मिलित करने का प्रयास किया गया है कि जिनको राज्य-प्रणीवि से सहायता प्राप्त होती है। इस प्रकार की बहुत-सी संस्थाएं हैं और इस संशोधन द्वारा भविष्य के लिये अल्पसंख्यकों के अधिकारों को अधिक विस्तृत बना दिया गया है और बहुसंख्यकों को भी अधिकार प्रदान किये गये हैं। इस प्रकार यह संशोधन बहुत ही शक्ति सम्पन्न है और इस प्रकार से इससे राष्ट्र-निर्माण ही होगा।

इसके अतिरिक्त, श्रीमान्, इस प्रावधान से 'सम्प्रदाय' शब्द को निकालने का प्रयास किया गया है क्योंकि 'सम्प्रदाय' का कोई अर्थ ही नहीं है। यदि वास्तव में कुछ समान गुणों से किसी सम्प्रदाय का अस्तित्व निश्चित किया जाता है और सभी सम्प्रदाय 'धर्म अथवा भाषा' शब्दों में सन्निहित हैं तो सम्प्रदाय का कोई

आधार ही नहीं रह जाता। इस प्रकार 'सम्प्रदाय' शब्द निरर्थक हो जाता है। इसके स्थान में 'प्रजाति अथवा जाति' शब्द रखने का प्रयास किया गया है। इस प्रकार यह प्रावधान इतना विस्तृत बना दिया गया है कि जाति, प्रजाति, भाषा अथवा धर्म के आधार पर किसी भी प्रकार के विभेद की आज्ञा नहीं है।

मेरा यह निवेदन है कि इन सभी दृष्टिकोणों से विचार करने पर इस संशोधन की सार्थकता देखकर इसे सभा को एकमत से स्वीकार कर लेना चाहिये।

***उपाध्यक्षः** माननीय सदस्य महोदय के नाम से दो संशोधन और हैं अर्थात् संशोधन संख्या 27 और 28।

***पंडित ठाकुरदास भार्गवः** मैं उनमें से किसी को उपस्थित नहीं करना चाहता परन्तु मैं संशोधन संख्या 31 को प्रस्तुत करना चाहता हूं।

***उपाध्यक्षः** वह दूसरे वर्ग में आता है। तो माननीय सदस्य महोदय संशोधन संख्या 27 और 28 को उपस्थित नहीं कर रहे हैं।

[संशोधन संख्या 705, 691 और 688 (दूसरा भाग) उपस्थित नहीं किये गये।]

***मौलाना हसरत मोहानी** (संयुक्तप्रान्त : मुस्लिम): माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर के संशोधन पर मेरा एक संशोधन था। मेरा यह विचार था कि वे अवश्य ही उसे उपस्थित करेंगे। परन्तु चूंकि उन्होंने उसे वापस ले लिया है इसलिये अब मैं कहां जाऊं?

***उपाध्यक्षः** आप केवल अपनी जगह पर बैठ जायें। राजनैतिक जीवन में ऐसी बातें हुआ ही करती हैं।

इस प्रकार संशोधन संख्या 691 पर सभी संशोधन गिर जाते हैं। अब हम संशोधन संख्या 692 पर आते हैं।

***पंडित ठाकुरदास भार्गवः** संशोधन संख्या 690 का क्या होगा?

***उपाध्यक्षः** उसे बाद को उठाया जायेगा। चूंकि इनका आशय समान है इसलिये इन पर एक साथ विचार होगा। मैं यह जानने का प्रयास कर रहा हूं कि इन पर मत लिया जायेगा अथवा नहीं।

[उपाध्यक्ष]

मैं संशोधन संख्या 692 को उपस्थित करने की आज्ञा नहीं दे सकता क्योंकि यह संशोधन संख्या 687 पर उपस्थित किये हुए संशोधन में आ जाता है।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 689 । यह एक शाब्दिक संशोधन है, इसलिये इसे उपस्थित करने की आज्ञा नहीं दी जाती।

[संशोधन संख्या 693, 694, 696, 697 (पहला भाग) और 698 उपस्थित नहीं किये गये।]

अब हम संशोधन संख्या 690 पर आते हैं जो पंडित ठाकुरदास भार्गव के नाम से है।

***पंडित ठाकुरदास भार्गव:** मैं इस पर एक संशोधन उपस्थित करना चाहता हूं। श्रीमान्, मैं यह उपस्थित करता हूं कि :

"संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 690 के स्थान में निम्नलिखित रखा जाये:

अनुच्छेद 23 के खण्ड (3) में जहां कहीं 'community' (सम्प्रदाय) शब्द आया है उसे निकाल दिया जाये।"

यह संशोधन संख्या 690 पर एक संशोधन है। इस सम्बन्ध में कुछ अधिक कहने की आवश्यकता नहीं है। मैं यह कह चुका हूं कि 'सम्प्रदाय' शब्द से कुछ भी अर्थबोध नहीं होता। किसी सम्प्रदाय को अन्य सम्प्रदाय की तुलना में विशिष्ट बनाने के लिये कोई ऐसा गुण नहीं है जो 'धर्म अथवा भाषा, शब्दों में सन्निहित नहीं है। इन शब्दों से पर्याप्त रूप से वह आशय व्यक्त हो जाता है जो 'सम्प्रदाय' शब्द से व्यक्त होता है। इसलिये उस प्रावधान में 'सम्प्रदाय' शब्द निरर्थक है और उसे निकाल दिया जाना चाहिये।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 695 । यह एक शब्दिक संशोधन है और इसलिए इसे उपस्थित करने की आज्ञा नहीं दी जाती।

[संशोधन संख्या 697 (दूसरा भाग) और 699 उपस्थित नहीं किये गये।]

संशोधन संख्या 700 को उपस्थित करने की आज्ञा नहीं दी जाती क्योंकि निदेशक सिद्धान्तों के सम्बन्ध में जिस अन्य संशोधन का सुझाव रखा गया है उसमें वह आ जाता है।

संशोधन संख्या 701 और 702 का आशय समान है और इसलिये उन पर एक साथ विचार किया जायेगा।

(संशोधन संख्या 701, 702 और 703 उपस्थित नहीं किये गये।)

संशोधन संख्या 704 अधिक विस्तृत है और उसे उपस्थित किया जा सकता है।

***श्री दामोदर स्वरूप सेठ** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): श्रीमान्, मैं यह उपस्थित करता हूं कि :

"अनुच्छेद 23 के खण्ड (3) के उपखण्ड (क) के स्थान में निम्नलिखित रखा जाये:

'(a) Linguistic minorities shall have the right to establish, manage and control educational institutions for the promotion of the study and knowledge of their language and literature, as well as for imparting general education to their children at primary and pre-primary stage through the medium of their own languages.' "

[(क) एक-भाषा-भाषी अल्पसंख्यकों को अपनी भाषा तथा साहित्य की उन्नति तथा अध्ययन के लिये तथा अपनी भाषाओं के माध्यम द्वारा अपने बच्चों को प्राथमिक तथा पूर्व-प्राथमिक स्तरों पर सामान्य शिक्षा देने के लिये शिक्षा-संस्थाओं को स्थापित करने, उनका प्रबन्ध करने तथा उन पर नियंत्रण रखने का अधिकार होगा।

अनुच्छेद 23 के खण्ड (3) के उपखण्ड (क) में स्पष्टत: धर्म और सम्प्रदाय पर आधृत अल्पसंख्यकों को स्वीकार किया गया है, किन्तु मेरे संशोधन में केवल भाषा पर आधृत अल्पसंख्यकों को स्वीकार किया गया है। श्रीमान्, मेरी यह धारणा है कि असाम्प्रदायिक राज्य में धर्म और सम्प्रदाय पर आधृत अल्पसंख्यकों को स्वीकार न करना चाहिये। यदि उन्हें स्वीकार किया गया तो मेरा यह निवेदन है कि हम अपने राज्य को असाम्प्रदायिक राज्य नहीं कह सकते हैं। धर्म अथवा सम्प्रदाय पर आधृत अल्पसंख्यकों की स्वीकृति असाम्प्रदायिकता का शून्यन है। इसके अतिरिक्त, श्रीमान्, यदि इन अल्पसंख्यकों को स्वीकार किया

[श्री दामोदर स्वरूप सेठ]

गया और इन्हें अपनी शिक्षा-संस्थाओं को स्थापित करने तथा उनका प्रबन्ध करने का अधिकार दिया गया तो इससे राष्ट्रीय एकता के मार्ग में तो बाधा पड़ेगी ही यद्यपि वह भारत ऐसे विभिन्न धर्मों के देश में अत्यंत आवश्यक है परन्तु साथ ही इससे साम्प्रदायिकता को तथा संकुचित विचारधाराओं को प्रोत्साहन मिलेगा। यही हमारा पिछला अनुभव रहा है जिसका भयंकर परिणाम हमें भोगना पड़ा है। इसलिये मेरा यह निवेदन है कि केवल भाषा के आधार पर अल्पसंख्यकों को स्वीकार करना चाहिये और उन्हें अपनी शिक्षा-संस्थाएं स्थापित करने तथा उनका प्रबन्ध करने का अधिकार दिया जाना चाहिये और वह भी केवल इसलिये कि वे अपनी भाषा तथा अपने साहित्य की उन्नति कर सकें और अपनी ही भाषा में प्राथमिक शिक्षा और पूर्व-प्राथमिक शिक्षा दे सकें। उच्च शिक्षा राष्ट्र-भाषा के माध्यम द्वारा ही दी जानी चाहिये। इसलिये, श्रीमान, मेरा यह निवेदन है कि यह संशोधन निर्दोष है और किंचित्मात्र भी हानिकार नहीं है और मुझे आशा है कि यह सभा इसे बिना किसी प्रकार के संकोच के स्वीकार कर लेगी।

(संशोधन संख्या 706 उपस्थित नहीं किया गया।)

प्रोफेसर के.टी. शाहः श्रीमान्, मैं यह उपस्थित करता हूं किः

"अनुच्छेद 23 के खण्ड (3) के उपखण्ड (क) के साथ निम्नलिखित परादिक जोड़ दिया जायेः

'Provided that no part of the expenditure in connection with such institutions shall fall upon or be defrayed from the public purse; and provided further that no such institution, nor the education and training given therein shall be recognised, unless it complies with the courses of instruction, standards of attainment, methods of education and training, equipment and other condition laid down in the national system of education.'"

(पर इस प्रकार की संस्थाओं के व्यय के किसी भाग को सार्वजनिक कोष वहन न करेगा और न उससे वह पूरा ही किया जायेगा और यह भी कि इस प्रकार की कोई संस्था और उसमें दी जाने वाली शिक्षा तथा प्रशिक्षा को उस समय तक स्वीकार न किया जायेगा जब तक कि वह

राष्ट्रीय शिक्षा-प्रणाली में निर्धारित शिक्षा के पाठ्यक्रम, शिक्षा के आदर्शों और शिक्षा तथा प्रशिक्षा की प्रणाली, सामग्री तथा अन्य प्रतिबन्धों के अनुरूप न हो।)

इस संशोधन का सार वही है या उसी के समान है, जो कि मेरे कल अथवा परसों उपस्थित किये हुये संशोधन का था अथवा जो सार संशोधन संख्या 664 का था। केवल उसका स्वरूप समर्थन का था और इसका निराकरण का है, जिससे यह अधिक स्पष्ट हो जाता है कि चाहे आरम्भ में इस प्रकार की राष्ट्रीय संस्थाओं का आधार तथा इसकी नीवि कुछ भी रही हो, उसके व्यय का कोई भाग अंशत: अथवा पूर्णत: सार्वजनिक कोष से पूरा नहीं किया जायेगा। मेरे विचार से यह व्यवस्था आवश्यक है। विशेषतया इस दृष्टि से कि कुछ लोग उपरोक्त समर्थन के स्वरूप से लाभ उठा सकते हैं। मैं इस सभा का समय यह बताने में नष्ट नहीं करना चाहता कि वास्तव में यह संशोधन पहले संशोधन के समान नहीं है किन्तु केवल यह कहना चाहता हूं कि इसका सार वही है। मेरी यह धारणा है कि केवल 48 घंटे के अन्दर मैं इस सभा को अपने दृष्टिकोण को बदलने के लिए राज़ी नहीं कर सकता और इसलिये इस संशोधन पर अधिक बोलकर मैं सभा का समय नष्ट नहीं करना चाहता।

(संशोधन संख्या 713 उपस्थित नहीं किया गया।)

***श्री ज़ैड.एच. लारी** (संयुक्तप्रान्त : मुस्लिम): श्रीमान्, मैं यह उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 23 के खण्ड (3) के बाद निम्नलिखित नया खण्ड प्रविष्ट किया जाये :

'(4) Any section of the citizens residing in the territory of India or any part thereof having a distinct language and script shall be entitled to have primary education imparted to its children through the medium of that language and script.'

[(4) भारत के राज्य-क्षेत्र अथवा उसके किसी भाग के निवासी नागरिकों के किसी वर्ग को, जिसकी विशेष भाषा और लिपि हो, अपने बच्चों को उस भाषा और लिपि के माध्यम द्वारा प्राथमिक शिक्षा दिलाने का अधिकार होगा।]

[श्री ज़ैड.एच. लारी]

मि. करीमुद्दीन ने इस संशोधन पर एक संशोधन की सूचना दी है। उसके उपस्थित होने पर मैं उसे सहर्ष स्वीकार करूंगा। वह संशोधन इस सम्बन्ध में है कि ये शब्द अर्थात् 'यदि इस प्रकार के विद्यार्थी पर्याप्त संख्या में हों तो' जोड़ दिये जायें।

इस सम्बन्ध में पहला प्रश्न यह उठता है कि क्या समाज के अथवा किसी अल्पसंख्यक-वर्ग के हितों की दृष्टि से यह आवश्यक है कि किसी व्यक्ति को उसकी मातृभाषा के माध्यम द्वारा प्राथमिक शिक्षा दी जाये? यह बहुत ही सार्थक प्रश्न है और मैं इसका उत्तर दूंगा। हाल में ही भारत सरकार ने एक प्रस्ताव स्वीकार किया और उसे 14 अगस्त सन् 1948 ई. के गजट में प्रकाशित किया। उस प्रस्ताव में यह कहा गया है कि:

"सरकार ने इस सिद्धान्त को स्वीकार किया है कि बच्चों को प्राथमिक शिक्षा उनकी मातृभाषा के माध्यम द्वारा दी जानी चाहिये। सभी शिक्षाविद् इससे सहमत हैं कि इस सिद्धान्त का किसी प्रकार भी खण्डन बच्चों के लिये और इसलिये समाज के हितों के लिये हानिकारक होगा।"

उस प्रस्ताव में आगे यह भी कहा गया है कि—"इस प्रकार के प्रतिबन्धों के होते हुए किसी राज्य अथवा प्रान्त के लिये किसी एक भाषा को शिक्षा के माध्यम के रूप में स्वीकार करना असम्भव हो जाता है। जिस प्रान्त में ऐसे लोगों के समुदाय निवास करते हैं, जो विभिन्न भाषाएं बोलते हैं, किसी एक भाषा को स्वीकार करने के प्रयास से तथा सभी को उसे सीखने के लिये बाध्य करने से अवश्य ही असंतोष और कटुता उत्पन्न होगी। इसका अन्तर्प्रान्तीय सम्बन्धों पर प्रभाव पड़ेगा और प्रत्याघात का कुचक्र चल पड़ेगा।"

अन्त में उसमें यह कहा गया है कि:

"भारत सरकार की यह सम्मति है कि देश के उच्च हितों को ध्यान में रखते हुए यह वांछनीय है कि सभी प्रान्तों तथा राज्यों की सरकारें उपरोक्त नीति का अनुसरण करें।"

इस प्रकार इस प्रस्ताव में भी यह स्वीकार किया गया है कि समाज के तथा अल्पसंख्यकों के हितों की दृष्टि से यह आवश्यक है कि अल्पसंख्यकों के बच्चों को उनकी मातृभाषा के माध्यम द्वारा प्राथमिक शिक्षा दी जाये।

इस अवसर पर मैं सभा का ध्यान शिक्षा-मंत्री माननीय मौलाना अबुल कलाम आज़ाद के उस उत्तर की ओर दिलाऊंगा जो उन्होंने अधिराज्य की संसद् के पिछले सितम्बर के सत्र में दिया था।

***माननीय श्री के. सन्तानम्** (मद्रास : जनरल): क्या मैं माननीय सदस्य महोदय को यह बता सकता हूं कि उनके संशोधन का आशय यह है कि प्रत्येक बच्चे को तुरंत ही प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है? बिना उस अधिकार के यह अधिकार नहीं मांगा जा सकता। इसलिये हमने यह निदेशक सिद्धान्त निश्चित किया है कि...

***श्री ज़ैड.एच. लारी:** वह एक दूसरा प्रश्न हैं। मैं उसे बाद को उठाऊंगा। मैं इस अवसर पर सभा का ध्यान शिक्षा-मंत्री के उस उत्तर की ओर आकृष्ट कर रहा हूं जो उन्होंने अधिराज्य की संसद् में एक प्रश्न पूछे जाने पर दिया था।

***उपाध्यक्ष:** मेरा यह सुझाव है कि मि. लारी श्री सन्तानम् के दृष्टिकोण को ध्यान में रखें।

***श्री ज़ैड.एच. लारी:** मैं उसे ध्यान में रखूंगा। परन्तु प्रश्नोत्तर यह था। श्री एस.वी. कृष्णमूर्त्ति राव को उत्तर देते हुए शिक्षा-मंत्री मौलाना अबुल कलाम आज़ाद ने कहा था कि प्राथमिक पाठशालाओं में अर्थात् मौलिक शिक्षा की नीचे की श्रेणी में 6 से 11 वर्ष की आयु तक बच्चों की मातृभाषा ही शिक्षा का माध्यम होगी। इस सम्बन्ध में सरकार के प्रस्ताव में भी यह कहा गया है कि—"शिक्षा के केन्द्रीय परामर्शदातृ बोर्ड ने भारत में युद्धोत्तर शिक्षा की उन्नति के सम्बन्ध में सन् 1944 ई. में जो प्रतिवेदन प्रकाशित किया है उसमें यह सिफारिश की गई है कि माध्यमिक स्तर पर शिक्षा का माध्यम विद्यार्थियों की मातृभाषा होनी चाहिये।"

इसलिये यह नहीं कहा जा सकता है कि इस प्रकार के प्रावधान की आवश्यकता नहीं है।

दूसरा प्रश्न यह है कि क्या यह अधिकार इतना आधारभूत है कि इसे इस अध्याय में स्थान दिया जाये। स्वतंत्र भारत का जो सर्वप्रथम विधान बनाया गया था वह था नेहरू प्रतिवेदन, जो देशभक्तों के सम्राट् पंडित मोतीलाल नेहरू के

[श्री ज़ैड.एच. लारी]

पथ-प्रदर्शन से तैयार किया गया था। उसमें जिन मूलाधिकारों का सुझाव रखा गया है उनमें से एक यह है:

"राज्य अल्पसंख्यक लोगों के बच्चों को प्राथमिक पाठशालाओं में उनकी ही भाषा तथा उनमें प्रचलित लिपि द्वारा शिक्षा देने के लिये पर्याप्त व्यवस्था करेगा।" भारत सरकार के जिस प्रस्ताव की ओर मैंने अभी संकेत किया था उसमें भी इस अधिकार के आधारभूत स्वरूप को स्वीकार किया गया है। उसमें यह कहा गया है:

> "सभी प्रान्तीय भाषाएं भारतीय भाषाएं हैं और इसका कोई कारण नहीं है कि भारत का कोई प्रान्त अपने यहां निवास करने वाले बच्चों को अपनी मातृभाषा द्वारा शिक्षा प्राप्त करने के अधिकार से वंचित करे।"

इस प्रकार वर्तमान भारत सरकार ने भी और नेहरू प्रतिवेदन के निर्माता सात नेताओं ने इस अधिकार के स्वरूप को पूर्णतया स्वीकार किया है।

एक तीसरा प्रश्न भी उठता है और वह बहुत ही प्रासंगिक है। क्या भारत सरकार के इस प्रकार की नीति को कम से कम कुछ समय के लिये स्पष्टतया स्वीकार करने के पश्चात् भी इस अध्याय में इस प्रकार के प्रावधान की आवश्यकता है? मुझे अपने प्रांत का अनुभव है और उसके आधार पर मैं यह कह सकता हूं कि यह अत्यंत आवश्यक है। इस सम्बन्ध में मैं एक उदाहरण दूंगा। सभा इसकी ओर ध्यान देगी कि संयुक्त-प्रान्त एक द्विभाषा-भाषी प्रान्त है। वहां दो भाषाएं अर्थात् हिन्दी और उर्दू प्रयुक्त रही हैं और विभिन्न सम्प्रदायों के बहुत से लोग उनका अध्ययन करते रहे हैं। यदि मैं आपके सामने हाईस्कूल और मिडिल स्कूल की परीक्षाओं में बैठने वाले विद्यार्थियों के आंकड़े रखूं तो देखेंगे कि कम से कम एक तिहाई विद्यार्थी उर्दू लेकर परीक्षा में बैठे थे। सन् 1944 ई. में 11,617 विद्यार्थियों ने हिन्दी ली थी और 7,167 विद्यार्थियों ने उर्दू ली थी। सन् 1945 ई. में 12,423 हिन्दी लेकर बैठे थे और 7,426 उर्दू लेकर; सन 1946 ई. में 14,222 हिन्दी लेकर बैठे थे और 8,244 उर्दू लेकर; सन् 1947 ई. में 18,302 हिन्दी लेकर बैठे थे तो 13,080 उर्दू लेकर। इस प्रकार आप देखेंगे कि यदि दो तिहाई विद्यार्थी हाई स्कूल में हिन्दी लेकर बैठे थे तो एक तिहाई उर्दू लेकर।

परन्तु होता क्या है? पिछली मई में एकाएक एक पाठ्यक्रम प्रकाशित किया गया जिसको पढ़ने से यह ज्ञात होता है कि उर्दू बिल्कुल मिटा दी गई है। मुझे यह आश्वासन दिया गया कि मेरा भय निराधार है। परन्तु जब जुलाई, 1948 ई. में स्कूल खुले तो मुझे पता चला कि मैंने उस पाठ्यक्रम का आशय ठीक ही समझा था। मेरा 6 वर्ष का बच्चा मेरे पास आया और उसने कहा "आज मेरे मास्टर साहब ने मुझसे कहा कि मैं सब जोड़ हिन्दी में करूं और सिर्फ हिन्दी ही में करूं।" उससे यह भी कहा गया कि वह उर्दू की किताब न लाये। मुझे आश्चर्य हुआ। पूछताछ करने पर यह पता लगा कि सभी स्कूलों में यही दशा हैं। मैंने सभी सम्बन्धित व्यक्तियों को पत्र लिखे और मुझे फिर यह आश्वासन दिया गया कि इस आशय की एक सरकारी आज्ञा दी जा रही है कि जहां कहीं विद्यार्थी उर्दू में शिक्षा पाने की मांग करें उनके लिये इस प्रकार की व्यवस्था की जाये। इसके पश्चात् मैंने उस कालेज के प्रिंसिपल को यह लिखा कि वे उर्दू पढ़ाने का प्रबन्ध करें। मुझे यह उत्तर मिला कि यह नहीं किया जा सकता है। उन्होंने कहा कि इस प्रकार का प्रबन्ध नहीं किया जा सकता है। अन्त में जब मैंने उस पत्र को शिक्षा-मंत्री के पास भेजा तो अक्टूबर में यह उत्तर मिला कि इस प्रकार का प्रबन्ध उसी दशा में किया जा सकता है, जब विद्यार्थियों के अधिकांश संरक्षकों की यह इच्छा हो कि उर्दू में भी शिक्षा दी जाये। भारत सरकार के प्रस्ताव का और सभी उत्तरों का उद्देश्य यह था कि अल्पसंख्यकों को, जो 50 प्रतिशत से भी कम हैं, सुविधा दी जाये; परन्तु वह सुविधा नहीं दी गई और उसे बहुसंख्यकों की इच्छा पर निर्भर कर दिया गया। इसका परिणाम यह हुआ है कि एक ऐसे प्रान्त में जहां, हमारे प्रधान-मंत्री से नेक आत्मा के ही शब्दों में–"उत्तर भारत की मिश्रित संस्कृति का विकास आरम्भ हुआ और वह शताब्दियों तक होता रहा और इस आर्य संस्कृति के केन्द्र बने दिल्ली और संयुक्तप्रान्त और वे अब भी उसके केन्द्र हैं और वे आज भी प्राचीन हिन्दू संस्कृति और फारसी संस्कृति के केन्द्र है" आज उर्दू की शिक्षा को, जो मुस्लिम संस्कृति का प्रधान श्रोत है, समाप्त कर दिया गया है। लखनऊ और इलाहाबाद में और वास्तव में कई जगहों में, जहां उर्दू जानने वाले लोग पर्याप्त संख्या में हैं, कम से कम इन दो स्थानों में प्राथमिक शिक्षा के सम्बन्ध में मातृभाषा द्वारा शिक्षा देने का कोई प्रबन्ध नहीं किया गया हैं। इलाहाबाद और लखनऊ के बारे में भी जो उर्दू के केन्द्र समझे जाते हैं, मुझे

[श्री ज़ैड.एच. लारी]

अच्छी प्रकार ज्ञात है कि जहां तक प्राथमिक शिक्षा का सम्बन्ध है इन स्थानों में अल्पसंख्यक-वर्गों के बच्चों के लिये कोई प्रबन्ध नहीं किया गया है। इसलिये मुझे अपने ही प्रान्त के अनुभव से यह प्रत्यक्ष हो जाता है कि इस प्रकार के प्रावधान की आवश्यकता है और इस प्रकार के प्रावधान को विधान में स्थान मिलना चाहिये। परन्तु मैं एक कठिनाई को या यों कहिये कि दो कठिनाइयों को अनुभव करता हूं। एक यह है कि यह हो सकता है कि किसी विशेष भाषा को शिक्षा का माध्यम बनाने की मांग करने वाले विद्यार्थी बहुत थोड़े हों। काज़ी सय्यद करीमुद्दीन ने जिस संशोधन की सूचना दी है उससे यह कठिनाई दूर हो जाती है।

एक कठिनाई और है और वह बताई जा चुकी है। मैने "नागरिकों के किसी वर्ग को" शब्द रखे हैं। यह हो सकता है कि किसी प्रान्त के ऐसे थोड़े से लोग जो दूसरे प्रान्त में बस गये हों यह मांग कर सकते हैं कि उनके बच्चों को उनकी ही भाषा के माध्यम द्वारा शिक्षा दी जाये। परन्तु 'नागरिकों के वर्ग' के स्थान में 'किसी अल्पसंख्यक-वर्ग' शब्द रखने से इस आपत्ति का निराकरण हो सकता है। मेरे विचार से बेगम ऐजाज़ रसूल ने इस संशोधन की सूचना दी है। इन दो संशोधनों के पश्चात् यह खण्ड इस प्रकार हो जायेगा:

"Any minority residing in the territory of India or any part thereof having a distinct language and script shall be entitled to have primary education imparted to its children through the medium of that language and script in case of substantial number of such students being available."

(भारत के राज्य-क्षेत्र अथवा उसके किसी भाग के निवासी किसी अल्पसंख्यक-वर्ग को, जिसकी विशेष भाषा और लिपि हो, अपने बच्चों को, यदि इस प्रकार के विद्यार्थी पर्याप्त संख्या में हों तो, उस भाषा और लिपि के माध्यम द्वारा प्राथमिक शिक्षा दिलाने का अधिकार होगा।)

अब जहां श्री सन्तानम् की आपत्ति का सम्बन्ध है, निदेशक सिद्धान्तों में हमने यह कहा है कि राज्य चौदह वर्ष की आयु तक शिक्षा देने का प्रबन्ध करेगा, इत्यादि। श्रीमान्, आपको स्मरण होगा कि उस खण्ड का मूलरूप इस प्रकार था:

"प्रत्येक नागरिक को नि:शुल्क प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार होगा और राज्य इसका प्रयास करेगा कि...इत्यादि"

"प्रत्येक नागरिक को नि:शुल्क प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार होगा" शब्द निकाल दिये गये थे और इस प्रकार का प्रस्ताव करते समय प्रस्तावक महोदय ने कहा था कि यह एक मूलाधिकार है और इसलिये यह खण्ड इस अध्याय में नहीं रखा जा सकता है। इसलिये मैंने इस आशय के एक अन्य संशोधन की सूचना दी है कि मूलाधिकारों में एक अनुच्छेद इस प्रकार का होना चाहिये कि प्रत्येक नागरिक को प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है। जहां तक निदेशक सिद्धान्तों के उस खण्ड का सम्बन्ध है उसका केवल प्राथमिक शिक्षा से ही नहीं बल्कि माध्यमिक शिक्षा से भी सम्बन्ध है। जो भी हो, हम इस खण्ड में अल्पसंख्यकों के सांस्कृतिक तथा शैक्षिक अधिकारों पर विचार कर रहे हैं। मैं यहां इस शैक्षिक अधिकार केा प्रविष्ट कराना चाहता हूं कि प्राथमिक शिक्षा मातृभाषा के माध्यम द्वारा दी जायेगी। इसमें यह नहीं कहा गया है कि प्राथमिक शिक्षा दी जाये, परन्तु यदि प्राथमिक शिक्षा के लिये प्रबन्ध किया जाये तो वह मातृभाषा के माध्यम द्वारा ही दी जाय। इस सम्बन्ध में कोई कानूनी अड़ंगा नहीं दिखाई देता है। इन शब्दों के साथ, श्रीमान्, मैं अपने संशोधन को उपस्थित करता हूं।

***उपाध्यक्ष:** सूची 3 का संशोधन संख्या 53, जो काज़ी सय्यद करीमुद्दीन के नाम से है।

***काज़ी सय्यद करीमुद्दीन** (मध्यप्रान्त और बरार : मुस्लिम): उपाध्यक्ष महोदय, मैं इसे आवश्यक नहीं समझता कि मैं मि. लारी द्वारा प्रस्तुत संशोधन के आशय की व्याख्या करूं। मैंने मि. लारी के संशोधन पर एक संशोधन उपस्थित करना है वह इस प्रकार है :

"संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 714 में अनुच्छेद 23 के प्रस्तावित खण्ड (4) में अन्त में (अंग्रेज़ी में) निम्नलिखित शब्द जोड़ दिये जायें:

'in case of substantial number of such students being available."

[काजी सय्यद करीमुद्दीन]

(यदि इस प्रकार के विद्यार्थी पर्याप्त संख्या में हों तो)"

श्रीमान्, मूलाधिकारों द्वारा पर्यटन की तथा व्यापार और वाणिज्य की स्वतंत्रता प्रदान की गई है। इसलिये यह सम्भव है कि लोग देश के एक भाग से दूसरे भाग में स्वतंत्रता से पर्यटन करेंगे और अन्य प्रान्तों में बस जायेंगे। इसके अतिरिक्त सरकारी नौकरों की भी एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त में बदली हो सकती है। उदाहरण के लिये दिल्ली के नगर को ही लीजिये। दिल्ली में मद्रासी हैं, बंगाली हैं, मुसलमान हैं और तेलगू हैं। यदि प्राथमिक स्कूलों में उनके लिये कोई व्यवस्था नहीं की गई तो कम से कम शिक्षा की प्राथमिक अवस्था में उन्हें अपने बच्चों को अपनी मातृभाषा के माध्यम द्वारा पढ़ाना कठिन हो जायेगा। इसलिये मेरा यह निवेदन है कि मि. लारी का संशोधन केवल मुसलमानों की, अल्पसंख्यकों की दृष्टि से ही महत्वपूर्ण नहीं है परन्तु बंगाल, मद्रास और अन्य प्रान्तों के लोगों की दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण है। इसलिये मि. लारी का संशोधन मेरे संशोधन के साथ स्वीकार कर लिया जाना चाहिये।

***उपाध्यक्ष:** एक अल्पकालिक सूचना द्वारा उपस्थित संशोधन है जो बेगम ऐज़ाज रसूल के नाम से है।

***बेगम ऐज़ाज रसूल** (संयुक्त प्रान्त : मुस्लिम): श्रीमान्, मैं यह उपस्थित करती हूं कि:

"मि. लारी द्वारा उपस्थित संशोधन में 'section of the citizens' (नागरिकों के किसी वर्ग) शब्दों के स्थान में 'minority' (किसी अल्पसंख्यक-वर्ग शब्द रखे जायें।"

यह खण्ड फिर इस प्रकार हो जायेगा:

"Any minority residing in the territory of India or any part thereof having a distinct language and script shall be entitled to have primary education imparted to its children through the medium of that language and script."

(भारत के राज्य-क्षेत्र अथवा उसके किसी भाग के निवासी किसी अल्पसंख्यक-वर्ग को, जिसकी विशेष भाषा और लिपि हो, अपने बच्चों को उस भाषा और लिपि के माध्यम द्वारा प्राथमिक शिक्षा दिलाने का अधिकार होगा।)

श्रीमान्, मेरा संशोधन स्वव्याख्यात्मक है और मि. लारी का भाषण सुनने के पश्चात् मैं यह अनुभव करती हूं कि मुझे अब विस्तारपूर्वक व्याख्या करने की आवश्यकता नहीं है। विधान के मसौदे में 'अल्पसंख्यक-वर्ग' की परिभाषा की गई है। मेरे विचार से जिन अल्पसंख्यकों की विशेष भाषा और लिपि हो उन्हें ही राज्य को इस अधिकार की प्रत्याभूति देना चाहिये कि उनके बच्चों को अपनी मातृभाषा में शिक्षा पाने के लिये सभी प्रकार की सुविधाएं दी जायेगी। मेरे विचार से इस सम्बन्ध में किसी प्रकार का भी मतभेद नहीं हो सकता है। यदि कोई बच्चा किसी ऐसे वर्ग का हो जिसकी भाषा और लिपि राज्य की भाषा और लिपि से भिन्न हो तो उसके लिये अन्य भाषा में शिक्षा पाना असम्भव है क्योंकि इससे शिक्षा के सिद्धान्त का ही हनन होता है। आपको बच्चों को दूसरों की भाषा और लिपि द्वारा शिक्षा ग्रहण करने के लिये बाध्य न करना चाहिये क्योंकि इससे उनके मस्तिष्क पर भार पड़ेगा। श्रीमान्, इस संशोधन का उद्देश्य यह नहीं है कि अल्पसंख्यकों के बच्चे राज्य की भाषा को न सीखें। राज्य की भाषा को सीख कर, चाहे वह भाषा कोई भी क्यों न हो, अल्पसंख्यकों के बच्चों को ही लाभ होगा क्योंकि राज्य की भाषा को सीख कर ही वे भविष्य में अपनी आर्थिक अवस्था सुधार सकते हैं और नौकरी इत्यादि प्राप्त कर सकते हैं। इसलिये यह न समझा जाना चाहिये कि मैं किसी प्रकार भी अल्पसंख्यकों के बच्चों के राज्य की भाषा सीखने के विरोध में हूं। मैं केवल एक आधारभूत बात कर रही हूं, क्योंकि अच्छी नीवि पर ही शिक्षा को खड़ी करके वह प्रभावपूर्ण हो सकती है। श्रीमान्, मेरा तो यह विचार था कि इस अवसर पर इस संशोधन को उपस्थित करना आवश्यक नहीं था परन्तु व्यवहार में हमने कुछ कठिनाइयों का अनुभव किया है और इसीलिये यह आवश्यक है कि मूलाधिकारों में कोई ऐसा प्रावधान रखा जाये जिससे स्थिति स्पष्ट हो जाये और भारत के राज्य-क्षेत्र में निवास करने वाले अल्पसंख्यकों के बच्चों को इसकी प्रत्याभूति मिल जाये कि उन्हें प्राथमिक स्तर

[बेगम ऐजाज रसूल]

पर अपनी मातृभाषा में शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार हैं। इन शब्दों के साथ, श्रीमान्, मैं इस संशोधन को उपस्थित करती हूं और मुझे आशा है कि वह स्वीकार कर लिया जायेगा।

(संशोधन संख्या 715 उपस्थित नहीं किया गया।)

***उपाध्यक्षः** अब इस अनुच्छेद पर सामान्य बहस हो सकती है।

***श्री मिहिरलाल चट्टोपाध्याय** (पश्चिमी बंगाल : जनरल): उपाध्यक्ष महोदय, विधान के मसौदे के इस विशेष अनुच्छेद 23 में अल्पसंख्यकों को निश्चित रूप से यह प्रत्याभूति दी गई है कि उनकी भाषा, संस्कृति और लिपि की हर प्रकार से रक्षा की जायेगी। इस देश में विभिन्न प्रकार के अल्पसंख्यक हैं परन्तु भाषा, लिपि और संस्कृति पर आधृत सभी अल्पसंख्यकों को इस अनुच्छेद द्वारा वास्तव में बहुत रक्षण प्राप्त हो जायेगा। यह सच है कि इस देश के विभिन्न प्रान्तों में ऐसे अल्पसंख्यक निवास करते हैं जिनकी भाषा बहुसंख्यकों की भाषा से भिन्न है और यह भी सच है कि भारत के कई प्रान्तों में भाषा पर आधृत अल्पसंख्यकों को कई प्रकार की अयोग्यताओं को सहन करना पड़ता है। इसका यह परिणाम हुआ है कि कुछ समय से भाषा की तानाशाही तथा उसके साम्राज्यवाद का दबी हुई ज़बान से विरोध किया जा रहा है। श्री टी. टी. कृष्णमाचारी ने भी भाषा के साम्राज्यवाद की ओर इस सभा में संकेत किया था। इस सम्बन्ध में मैं उनका विरोध नहीं करता, परन्तु मेरी समझ में नहीं आता कि इस देश के नागरिकों को अपनी राष्ट्रभाषा अपनी देश भाषा को सहर्ष स्वीकार करने में कितनी देर लगेगी। इसके साथ ही इसे भी स्वीकार करना चाहिये कि यदि किसी अल्पसंख्यक-वर्ग की अपनी विशेष भाषा हो और वह एक ऐसे प्रान्त में हो जहां की भाषा उसकी भाषा से भिन्न हो तो वह अवश्य ही यह चाहेगा कि उसकी भाषा और संस्कृति में किसी प्रकार का हस्तक्षेप न हो और उनका संधारण हो। यह सच है कि यह देश विभिन्न प्रान्तों में विभाजित है और प्रत्येक प्रान्त की अपनी प्रान्तीय भाषा है किन्तु दुर्भाग्य से इन प्रान्तों की सीमाएं निश्चित करने में ब्रिटिश सरकार ने इसकी चिन्ता न की कि उन्हें भाषा के आधार पर निश्चित किया जाये। इसी कारण प्रत्येक प्रान्त में अल्पसंख्यक हैं और वास्तव में कुछ

अंश में यह संकट उपस्थित हो गया है कि विभिन्न प्रान्तों में अल्पसंख्यकों की भाषा और संस्कृति को अनेक प्रकार की अयोग्यताओं को सहन करना पड़े।

इस अनुच्छेद 23 द्वारा अल्पसंख्यकों का यह आश्वासन दिया गया है कि उनकी भाषाओं की रक्षा की जायेगी। वे अपनी भाषाओं की सुरक्षा ही न कर सकेंगे बल्कि उनका निश्चित रूप से विकास भी कर सकेंगे। अपनी भाषाओं के रक्षण तथा विकास के लिये सरकार से सहायता प्राप्त करने के सम्बन्ध में भी अल्पसंख्यकों के प्रति कोई विभेद नहीं बरता जायेगा। इसलिये भारत के विभिन्न प्रान्तों में निवास करने वाले एक-भाषा-भाषी अल्पसंख्यकों के लिये यह अनुच्छेद 23 एक महान् अधिकार-पत्र है। किन्तु यह आवश्यक है कि किसी प्रान्त के अल्पसंख्यक नागरिक जीवन में अपने को हमेशा अकेला तथा उस प्रान्त के निवासियों से विशिष्ट न समझते रहें। अल्पसंख्यकों का भी यह कर्त्तव्य है कि वे जिस प्रान्त में निवास करते हों उसकी भाषा और संस्कृति को बहुत अंश तक स्वीकार करें। किन्ही भी अल्पसंख्यकों को किसी प्रान्त में विदेशियों के समान न रहना चाहिये अथवा उस प्रकार न रहना चाहिये—जैसे अंग्रेज़ और उनके सौतेले भाई कई वर्षों तक भारत में रहे हैं। साथ ही जहां तक अल्पसंख्यकों की भाषा और संस्कृति का सम्बन्ध है बहुसंख्यकों को उनके प्रति अधिक से अधिक सहिष्णुता दिखानी चाहिये। वास्तव में कुछ दिन पहले प्रान्तीय कांग्रेस समितियों को यह निर्देश करके कि किसी प्रान्त के ऐसे अल्पसंख्यक, जिनकी भाषा प्रान्त की भाषा से भिन्न हो, प्रान्तीय कांग्रेस समितियों से अपनी भाषा में पत्र व्यवहार कर सकते हैं; कांग्रेस ने एक नया आदर्श रखा है।

कई क्षेत्रों से भाषा के आधार पर प्रान्तों का पुनर्निर्माण करने की जो मांग की जा रही है वह बहुत कुछ विधान के मसौदे के इस अनुच्छेद के प्रावधानों से पूरी हो जायेगी। अल्पसंख्यकों को इसका अत्यंत भय है कि बहुसंख्यकों के उनकी भाषाओं के प्रति अत्यंत असहिष्णु होने से उनका अस्तित्व ही कहीं न मिट जाये। अल्पसंख्यक अपनी भाषाओं को सुरक्षित रखने के सम्बन्ध में सतर्क तथा सचेष्ट हैं और यह स्वाभाविक भी है। बहुसंख्यकों को अल्पसंख्यकों की भावनाओं तथा उनके दृष्टिकोण के प्रति सहानुभूति दिखाकर उन्हें समझने का प्रयास करना चाहिये। केवल इसी से विभिन्न प्रान्तों में भाषा के आधार पर प्रान्तों के पुनर्निर्माण

[श्री मिहिरलाल चट्टोपाध्याय]

के सम्बन्ध में जो आवाज़ उठ रही है वह बहुत कुछ बन्द हो जायेगी। हम सभी जानते हैं कि भारत के दो भागों में विभाजित होने के पश्चात् भाषा के आधार पर प्रान्तों का पुनर्निर्माण करने का मार्ग कंटकाकीर्ण हो गया है। इस समस्या को हल करने में बहुत समय लगेगा। परन्तु इसे स्मरण रखना चाहिये कि यदि भाषा और संस्कृति के सम्बन्ध में अल्पसंख्यकों पर अत्याचार अथवा आघात किया गया तो इस देश में संकटापन्न स्थिति उत्पन्न हो जायेगी जिससे प्रान्तीय सरकारें कठिनाई में पड़ जायेंगी। इसलिये इस अनुच्छेद 23 में विभिन्न प्रान्तों के बहुसंख्यकों को स्पष्टत: यह निर्देश किया गया है कि जहां तक भाषा और संस्कृति का सम्बन्ध है उन्हें अल्पसंख्यकों के हितों की रक्षा करनी चाहिये। यदि अल्पसंख्यकों के साथ व्यवहार करते समय उनके दृष्टिकोण को समझने तथा उनके हितों की रक्षा करने का वे प्रयास करें तो मेरे विचार से भाषा के आधार पर तुरंत ही प्रान्तों का पुनर्निर्माण करने के लिये भारत में जो आवाज़ उठाई गई है, वह बहुत कुछ बन्द हो जायेगी।

मैं इस अनुच्छेद का हृदय से समर्थन करता हूं।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): श्रीमान्, धर्म अथवा अन्य बातों पर आधृत शिक्षा-सम्बन्धी इस अनुच्छेद के बारे में मेरा यह विचार है कि अच्छा तो यह होता कि एक बहुत ही स्पष्ट और भ्रमशून्य प्रावधान रखा जाता। श्रीमान्, इस अनुच्छेद के कुछ प्रावधान परस्पर विरोधी हैं। यद्यपि विधान में यह स्वीकार किया गया है कि सभी सम्प्रदायों को धर्म के आधार पर शिक्षा देने का अधिकार है परन्तु अनुच्छेद 22 में यह कहा गया है कि जहां कहीं राज्य सहायता देता हो वहां किसी प्रकार की धार्मिक शिक्षा की व्यवस्था न होगी। इसके अतिरिक्त एक परादिक इस आशय का भी है कि जिन सम्प्रदायों को राज्य की सहायता अपेक्षित न हो वह अपनी इच्छानुसार तथा रीत्यनुसार धार्मिक शिक्षा दे सकते हैं। श्रीमान्, मेरा अपना यह विचार है कि जहां तक धार्मिक शिक्षा का सम्बन्ध है, इसका स्पष्ट शब्दों में उल्लेख होना चाहिये था कि यदि कोई शैक्षिक संस्था राज्य से सहायता ग्रहण करती हो तो उसमें किसी प्रकार की धार्मिक शिक्षा न दी जायेगी। मैं यह आपत्ति इसलिये नहीं कर रहा हूं कि मैं धर्म के विरुद्ध हूं।

श्रीमान्, मेरा धर्म पर तथा ईश्वर के अस्तित्व पर विश्वास है। परन्तु मैं अवश्य यह अनुभव करता हूं कि आजकल विभिन्न सम्प्रदायों की धार्मिक पुस्तकों का अनेक लेखक ऐसा अनुवाद करते हैं कि उससे कई धर्म अपमानित हो जाते हैं। कुछ लेखकों ने अपने राजनैतिक उद्देश्यों की सिद्धि के लिये कुछ अत्यंत सुन्दर मौलिक वाक्यांशों का अपनी भाषा में अपने ढंग से अनुवाद किया है जिसका परिणाम यह हुआ है कि धार्मिक कारणों से आज देश के टुकड़े-टुकड़े हो गये हैं। इसलिये श्रीमान्, मेरी यह इच्छा है कि शिक्षा के सम्बन्ध में, जो हमारे भविष्य की आधारशिला होगी, स्पष्ट शब्दों में यह कह देना चाहिये कि वर्तमान परिस्थिति में किसी ऐसी संस्था में, जो राज्य से सहायता पाती हो, धार्मिक शिक्षा की व्यवस्था न होगी।

श्रीमान्, मैं यह कह चुका हूं कि यद्यपि राज्य ने किसी धर्म को स्वीकृति नहीं दी है, परन्तु उसने ऐसी संस्थाओं को, जो राज्य से सहायता नहीं पाती हैं, अपने यहां धार्मिक शिक्षा देने की आज्ञा दी है। मैं उन धार्मिक ग्रन्थों का विवरण नहीं देना चाहता जो विभिन्न शिक्षालयों में पढ़ाये जाते हैं। मैं ऐसे शिक्षालयों को जानता हूं जहां धर्म के नाम पर साम्प्रदायिक विद्वेष ही फैलाया गया हैं। मैं कह नहीं सकता कि इस विधान के प्रभाव में आने पर जिस नव-युग का प्रादुर्भाव होगा उसमें भी इसी प्रकार की धार्मिक शिक्षा दी जायेगी अथवा नहीं। विभिन्न शिक्षालयों में जो धार्मिक शिक्षा दी जा रही है उस पर कोई आयंत्रण नहीं लगाया गया है। मैं इसके उदाहरण दे सकता हूं परन्तु मैं विभिन्न सम्प्रदायों के बीच विद्वेष नहीं फैलाना चाहता। मेरी केवल यह इच्छा है कि अच्छा तो यह होता कि विधान में यह स्पष्ट कर दिया जाता कि धार्मिक शिक्षा के प्रसंग में शिक्षा का क्या अर्थ है। इस सम्बन्ध में यह अध्याय मौन है। उसके मौन होने के अतिरिक्त मुझे तो इसका भय है कि धर्म के नाम पर शिक्षालयों में फिर उसी प्रकार की धार्मिक शिक्षा दी जाती रहेगी। मैंने इन दो अध्यायों को कई बार पढ़ा और यह अनुभव किया कि इस प्रकार के स्कूलों और कालेजों पर किसी प्रकार का नियंत्रण नहीं रखा गया है। इसके विपरीत यह कहा जा सकता है कि विधान द्वारा उन्हें अपनी इच्छानुसार धार्मिक शिक्षा देने की स्वतंत्रता दी गई है। हम यह जानते हैं कि इस देश में विभिन्न सम्प्रदाय धर्म से क्या समझते हैं और इसलिये, श्रीमान्, मेरी यह धारणा है कि इस अध्याय के प्रावधान अधिक स्पष्ट होने चाहिये थे।

[श्री आर. के. सिधवा]

जहां तक उन सुझावों और संशोधनों का सम्बन्ध है जिनका उद्देश्य यह है कि जहां विभिन्न सम्प्रदाय और अल्पसंख्यक निवास करें वहां उन्हीं की भाषाओं के माध्यम द्वारा शिक्षा दी जानी चाहिये, मैं यह देखता हूं कि खण्ड (ख) स्पष्ट है। परन्तु मैं श्री दामोदरस्वरूप सेठ के संशोधन को स्वीकार्य समझता हूं क्योंकि वह बहुत स्पष्ट है। मेरे विचार से राज्य इस विधान द्वारा भी किसी को इससे वंचित नहीं करता। यहां अल्पसंख्यकों को भ्रमवश धार्मिक अल्पसंख्यक न समझना चाहिये। अल्पसंख्यकों का अर्थ लोगों के विभिन्न वर्गों ही से है। उदाहरणार्थ बम्बई में लोगों के अठारह वर्ग हैं। इस समय चार लाख सिंधी वहां रहते हैं। कार्पोरेशन ने सिंधी भाषा को स्वीकार किया है। यद्यपि सरकार ने सिंधी भाषा को स्वीकार नहीं किया है परन्तु उसने उनके लिये स्कूल खोल दिये हैं। मेरे विचार से इस विधान में यह प्रावहित है कि जहां कहीं इस प्रकार के वर्ग अथवा एक-भाषा-भाषी सम्प्रदाय अथवा उपसम्प्रदाय हों तो राज्य उनको सभी प्रकार की सुविधाएं प्रदान करेगा। यदि राज्य यह न करे तो वह अपने कर्त्तव्य का पालन न करेगा। मुझे इस सम्बंध में कुछ भी सन्देह नहीं है कि विधान में इस आशय का प्रावधान है। हमने निदेशक सिद्धान्तों में भी यह कहा है कि प्रत्येक बच्चे को, चाहे वह किसी भी वर्ग का क्यों न हो, राज्य अनिवार्य रूप से शिक्षा देगा। इस सम्बन्ध में कुछ भी सन्देह नहीं है कि सभी बच्चों को, भले ही वे किसी छोटे अल्पसंख्यक-वर्ग अथवा एक-भाषा-भाषी अल्पसंख्यक-वर्ग के हो, उनकी मातृ-भाषा में शिक्षा दी जायगी। इसलिये मि. लारी का संशोधन अप्रासंगिक है। मुझे इस सम्बन्ध में कोई सन्देह नहीं है कि विधान में यह प्रावहित है और यदि इस प्रकार की शिक्षा की व्यवस्था न हो तो राज्य तथा प्रान्त और प्रान्तीय सरकारें, जिस प्रकार की शिक्षा की उन्हें व्यवस्था करनी चाहिये, उस प्रकार की व्यवस्था न करके अपने कर्त्तव्य से च्युत होंगे।

***श्री जयपाल सिंह** (बिहार : जनरल): उपाध्यक्ष महोदय, मैं बड़े हर्ष से इस अनुच्छेद का स्वागत करता हूं, विशेषतया इसलिये कि उसमें डॉ. अम्बेडकर ने यथोचित संशोधन कर दिया है। मुझे आशा है कि उस संशोधन को यह सभा स्वीकार कर लेगी। श्रीमान्, मेरी दृष्टि से इस अनुच्छेद से भारत के लिये एक नये युग का प्रादुर्भाव होता है। हाल में एक-भाषा-भाषी प्रान्तों के बारे में

बहुत-कुछ कहा गया है और पश्चिमी बंगाल के मेरे मित्र अभी संकेत कर चुके हैं कि इस अनुच्छेद द्वारा प्रान्तों की सीमाओं के पुनर्निर्धारण और नये प्रान्तों के निर्माण के लिये मार्ग खुल जाता है। श्रीमान्, मैं इस अनुच्छेद पर इस दृष्टि से विचार नहीं कर सकता। मैं इससे सहमत नहीं हूं कि केवल भाषा के आधार पर ही प्रान्तों का निर्माण होना चाहिये। अन्य बातों पर भी विचार किया जाना चाहिये। शासन प्रबन्ध की सुविधा, भौगोलिक स्थिति तथा आर्थिक अवस्था आदि पर भी विचार किया जाना चाहिये और तभी भाषा-सम्बन्धी तर्क को उतना महत्त्व दिया जा सकता है, जितना कि उसे वे लोग देना चाहते हैं, जिनको इसका खेद है कि वे किसी प्रान्त-विशेष में भाषा की दृष्टि से अल्पसंख्यक हैं मुझे आशा है कि इस सभा द्वारा इस अनुच्छेद के स्वीकार किये जाने पर सभी प्रान्तीय सरकारें इसकी भावना को तुरन्त ही व्यवहार में लायेंगी। उन्हें उस समय तक प्रतीक्षा करने की आवश्यकता नहीं है जब कि यह पूरा विधान अस्तित्व में आ जाये। मेरे प्रदेश में इस समय भी बहुत ही अहितकर भाषा-सम्बन्धी संघर्ष हो रहा है। मेरे निवासस्थान छोटा नागपुर में वह विकरालरूप ग्रहण कर रहा है और भाषा के आधार पर एक टुकड़े को पूर्व की ओर तो एक टुकड़े को दक्षिण की ओर और एक टुकड़े को पश्चिम की ओर ले भागने का प्रयास हो रहा है। इसे बिल्कुल भी ध्यान में नहीं रखा जाता कि इसके अतिरिक्त अन्य कारणों पर भी विचार करना आवश्यक है जैसे कि एक प्रश्न यह है कि शासन-प्रबन्ध की दृष्टि से अमुक-अमुक भाग को उस प्रदेश से अलग करना चाहिये या नहीं। मेरा यह अनुरोध है, और मैं पहले भी अन्यत्र यह अनुरोध कर चुका हूं कि नये प्रान्तों के निर्माण और सीमाओं के पुनर्निर्धारण के लिये केवल भाषा का ही तर्क कोई महत्त्व नहीं रखता। मुझे आशा है कि मेरा प्रदेश—विशेषतया बिहार, उड़ीसा और पश्चिमी बंगाल के प्रदेश—अब इस भाषा के प्रश्न को नई दृष्टि से हल करेंगे। उदाहरणार्थ, बिहार में बंगाली भाषी लोगों की हमेशा से यह शिकायत रही है कि उनके साथ प्रान्त के हिन्दी भाषी लोग दुर्व्यवहार करते रहे हैं। श्रीमान्, पहले बहुत कुछ हुआ है और वह एक दुःखद अध्याय है, परन्तु अब मुझे आशा है कि इस विशेष अनुच्छेद के विधान में स्थान पा जाने से एक-भाषा-भाषी अल्पसंख्यकों को भी यह विश्वास हो सकता है कि उनका भविष्य उज्जवल है और उन्हें अपनी भाषाओं के संरक्षण तथा विकास के लिये पर्याप्त अवसर मिलेगा। श्रीमान् जब हम

[श्री जयपाल सिंह]

भाषाओं की चर्चा करते हैं तो हमें उन भाषाओं का ध्यान आता है जो उन्नत हैं और जिनकी अपनी लिपि आदि हैं। मेरा यह अनुरोध है कि जिन भाषाओं की अपनी लिपि नहीं है उनके भी संरक्षण की आवश्यकता है और प्रोफेसर शाह के संशोधन के शब्दों में उन्हें भी समुन्नत बनाने की आवश्यकता है। भाषा-सम्बन्धी गणना के सम्बन्ध में हमें जो आंकड़े दिये गये हैं उन्हें देखने से मुझे यह पता लगता है कि इस देश की भाषाओं को पांच मुख्य विभागों में विभाजित किया गया है और आदिवासी भाषाओं को एक पृथक् विभाग में रखा गया हैं मुंडारी समूह की भाषाओं को ही लीजिये। आंकड़ों से मुझे यह ज्ञात होता है कि पचास लाख लोग मुंडारी भाषा बोलते हैं। इस सभा में कितने ऐसे सदस्य हैं जो यह जानते हैं कि मुंडारी एक परिपक्व भाषा है और उसमें एक विश्व-कोष है जिसके 14 अंक हैं? फिर भी क्या यह कहा जा सकता है कि मुंडारी-भाषी क्षेत्रों में उस भाषा को प्रोत्साहित किया जा रहा है? क्या यह सच नहीं है कि प्रत्येक शासक-वर्ग देश की भाषा को गिराने का प्रयास करता रहा है? हमने देखा है कि यदि कोई राजा उड़िया था तो उसने अपने राज्य के लोगों पर उड़िया भाषा को ही लादा। अंग्रेज़ आये और उन्होंने अंग्रेज़ी को हमारे गलों के नीचे उतारने का प्रयास किया। यह भी हो सकता है कि बंगाली-भाषी प्रदेशों में बंगाली पर ही ज़ोर दिया जाता हो। श्रीमान्, मैं इसे स्वीकार करता हूं कि प्रत्येक व्यक्ति को अपने प्रान्त की भाषा सीखनी चाहिये। हमें अभी इसका निर्णय करना है कि हमारी राष्ट्र-भाषा क्या होगी। हममें से प्रत्येक व्यक्ति को उस भाषा को सीखना चाहिये। मैं यह अनुरोध करना चाहता हूं कि भाषाओं का संरक्षण तथा उनकी समुन्नति होनी चाहिये। मैं यह अनुभव करता हूं कि इस व्यवस्था से कई लोगों को विशेषतया आदिवासियों को तीन भाषाएं सीखनी पड़ेंगी अर्थात् उन्हें अपनी भाषा सीखनी होगी, प्रान्तीय भाषा सीखनी होगी, और राष्ट्र-भाषा सीखनी होगी। परन्तु मेरे विचार से इससे अधिक भार न पड़ेगा। आखिर मातृभाषा को बोलने में तो अधिक प्रयास नहीं करना पड़ता परन्तु मुख्य बात यह है कि जिन प्रान्तों में एक भाषा-भाषी अल्पसंख्यक हैं, यद्यपि मुझे इन शब्दों से घृणा है, उनको ऐसी भाषाओं के संरक्षण तथा समुन्नति के लिये, जो इस योग्य हैं, कोई ठोस कार्य करना चाहिये। इसमें

संदेह नहीं है कि कुछ भाषाएं मिट जायेंगी। मेरे विचार से किसी ऐसी भाषा को जीवित रखना निरर्थक है जो स्वयं सजीव न हो और जो अन्य भाषाओं की तुलना में अपने पैरों खड़ी न हो सकती हो। मैं उन भाषाओं के पक्ष में नहीं बोल रहा हूं जो किसी काल में प्रयुक्त रहीं और फिर मिट गई, परन्तु मेरे मस्तिष्क में वे भाषाएं हैं जो सहस्त्रों वर्षों के बाद भी सजीव हैं और यदि उन्हें उन्नत बनाया जाये तो उनके द्वारा भूतकाल के कई विषयों के सम्बन्ध में शिक्षा दी जा सकती है। मैं एक उदाहरण दूंगा। हम प्राचीन भारतीय इतिहास के सम्बन्ध में बहुत कम जानते हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि इस देश के प्राचीन निवासियों की भाषाओं का नये आने वाले लोगों ने अध्ययन नहीं किया। यह एक दु:ख की बात है कि आदिवासियों की भाषाओं का अध्ययन विदेशियों ही ने किया है। आज शायद ही किसी प्रान्त का प्रधान मंत्री अपने प्रान्त के अधिकांश आदिवासियों की भाषा बोल सकता है। शायद ही इस देश में कोई मन्त्री ऐसा हो जो आदिवासियों की किसी भाषा को बोल सकता हो। यदि हम आर्यों से पहले की इन भाषाओं को उन्नत बनाएं तो हमें 'असुर' जैसे कई ग्रन्थों से आर्य भाषा-भाषी लोगों के आदिकाल के बारे में कई बातें ज्ञात हो जायेंगी। हमें प्राचीन काल में अपने देश तथा देशवासियों की अवस्था के बारे में अब भी बहुत कुछ जानना है। अनुच्छेद 23 को कई दृष्टिकोणों से देखा जा सकता है। श्रीमान्, मैं इस अनुच्छेद का बड़े हर्ष से स्वागत करता हूं और मुझे आशा है कि विधान के प्रभाव में आने के पहले ही प्रान्तीय सरकारें इस अनुच्छेद की भावना के अनुसार कार्य करेंगी ताकि भाषा-सम्बन्धी संघर्ष के कारण प्रान्तों में जो कटुता उत्पन्न हो गई है वह धीरे-धीरे समाप्त हो जाये और सभी एक-भाषा-भाषी अल्पसंख्यक यह समझने लगेंगे कि उनकी भाषाओं पर आघात न होगा और वे अपनी इच्छानुसार अपनी भाषाओं को उन्नत बना सकते हैं और यह कि उनकी भाषा का देश में समुचित स्थान है।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** उपाध्यक्ष महोदय, इस अनुच्छेद का सम्बन्ध एक ऐसी कठिन समस्या से है जिसे स्वतंत्र भारत ने हल करना है। धार्मिक

[माननीय श्री के. सन्तानम्]

अल्पसंख्यकों और अनुसूचित जातियों के प्रश्न भूतकाल की देन हैं और मुझे यह आशा है कि निकट भविष्य में ही वे काल तथा परिस्थिति के प्रभाव से विलुप्त हो जायेंगे। परन्तु एक-भाषा-भाषी अल्पसंख्यकों का प्रश्न कई दशाब्दियों तक एक प्रश्न के ही रूप में रहने वाला है और मेरे विचार से इसके कारण देश को बहुत कष्ट झेलना पड़ेगा।

श्रीमान्, मि. लारी और अन्य लोगों से, जो यह कहते हैं कि विधान में एक-भाषा-भाषी अल्पसंख्यकों को निश्चित आश्वासन दिये जाने चाहियें, मुझे बहुत सहानुभूति है परन्तु मेरे विचार से इस अनुच्छेद में जो प्रयास किया गया है उससे आगे बढ़ना सम्भव नहीं है। वह उनकी तीन प्रकार से रक्षा करता है। अनुच्छेद 23 के खण्ड (1) में प्रत्येक अल्पसंख्यक-वर्ग को अपनी संस्कृति के संरक्षण का अधिकार दिया गया है।

***मौलाना हसरत मोहानी:** यह कोई अधिकार नहीं है। यह कैसा अधिकार है?

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** श्रीमान्, आपको स्मरण होगा कि प्रथम विश्व-युद्ध के उपरान्त सारे यूरोप में अल्पसंख्यक-वर्ग केवल यह चाहते थे कि उन्हें अपने शिक्षालय स्थापित करने और अपनी संस्कृतियों के संरक्षण का अधिकार दिया जाये परन्तु फासिस्टों और नाज़ियों ने उन्हें यह अधिकार नहीं दिया। वास्तव में वे राज्य के शिक्षालय भी नहीं चाहते थे। वे राज्य से किसी प्रकार की सहायता भी नहीं चाहते थे। वे केवल यह चाहते थे कि उन्हें अपने रीति-रिवाज़ों तथा अपनी संस्कृतियों का अनुसरण करने दिया जाये तथा अपने शिक्षालयों को स्थापित करने तथा उनका संचालन करने की स्वतंत्रता दी जाये। इसलिये मेरे विचार से किसी अल्पसंख्यक-वर्ग के लिये यह उचित नहीं है कि वह अनुच्छेद 23 (1) में दिये हुए अधिकारों को निम्न दृष्टि से देखे।

श्रीमान्, अनुच्छेद 23 के खण्ड (2) में उनकी विभेद से रक्षा की गई है। यह सम्भव है कि भाषा के आधार पर कई प्रान्तों का निर्माण हो और इसलिये स्वभावत: सरकार में, मंत्रिमण्डल में और विधान-मण्डल में बहुसंख्यकों की भाषा बोलने वाले लोगों का प्रभुत्व हो। उस समय यह विभेद-विरुद्ध अधिकार मूलभूत तथ मूल्यवान प्रतीत होगा।

इसके अतिरिक्त इस अनुच्छेद के खण्ड (3) में यह प्रावहित है कि जब शिक्षा के लिये राज्य सहायता दे तो यह किसी शिक्षा-संस्था के प्रति इस कारण विभेद न बरतेगा कि, वह किसी अल्पसंख्यक-वर्ग के प्रबन्ध में है, चाहे उसका आधार साम्प्रदायिक हो अथवा भाषा का, और यह विशेषतया एक-भाषा-भाषी अल्पसंख्यक-वर्गों के सम्बन्ध में प्रयुक्त होगा। प्रत्येक प्रान्त में इन एक-भाषा-भाषी अल्पसंख्यकों के समूह हैं। उदाहरणार्थ, मेरे अपने प्रान्त तामिलनाडु में प्रत्येक जिले में ऐसे गांवों के समूह हैं जहां बहुत से तेलगू भाषी लोग बसते हैं। इस सम्बन्ध में हमें दो प्रकार की स्थिति के बीच ठीक-ठीक संतुलन करना होता है। प्रथम तो हमें एक-भाषा-भाषी अल्पसंख्यकों के विशाल समूहों को अपनी भाषा के माध्यम द्वारा ही शिक्षा का अधिकार, विशेषतया प्राथमिक शिक्षा का अधिकार, देना होता है। साथ ही ऐतिहासिक कारणों से जो एकीकरण हो रहा है उसमें हमें हस्तक्षेप नहीं करना होता है। हमें यह न सोचना चाहिये कि सैकड़ों-हज़ारों वर्षों तक ये एक-भाषा-भाषी अल्पसंख्यक-वर्ग इसी प्रकार बने रहेंगे जैसे वे इस समय हैं। ऐतिहासिक विकास को अवरुद्ध न करना चाहिये। इन अल्पसंख्यक-वर्गों को अपने यहां के बहुसंख्यकों के साथ मिल जाने में सहायता करनी चाहिये। उन्हें धीरे-धीरे स्थानीय भाषा सीख लेनी चाहिये और वहां के लोगों में समाविष्ट हो जाना चाहिये। अन्यथा वे उन प्रान्तों में एक प्रकार से विदेशी ही बने रहेंगे। इसलिये हमें कोई ऐसे कठोर प्रावधान न रखने चाहियें जिनसे प्रत्येक बच्चे की मातृभाषा की स्वतः रक्षा होती रहे। साथ ही यह विकास एकाएक न होने चाहिये और न किसी को उसे स्वीकार करने के लिये बाध्य ही करना चाहिये। जहां कहीं अल्पसंख्यकों के बहुत से बच्चे हों उन्हें शिक्षा, प्राथमिक शिक्षा, उनकी मातृभाषा में ही दी जानी चाहियें। परन्तु साथ ही उन्हें प्रान्तों के साधारण शिक्षालयों में जाने के लिये प्रोत्साहित करना चाहिये और उनकी सहायता भी करनी चाहिये, ताकि वे स्थानीय भाषा को सीख सकें और लोगों में घुलमिल जायें। मेरे विचार से इस खण्ड में इस प्रकार की परिस्थितियों के लिये बहुत ही व्यावहारिक व्यवस्था की गई है।

श्रीमान्, मि. लारी एक संशोधन करना चाहते हैं जिसका उद्देश्य यह है कि प्रत्येक बच्चे को, अथवा नागरिकों के प्रत्येक वर्ग को यह अधिकार होगा कि वह अपनी भाषा के माध्यम द्वारा प्राथमिक शिक्षा ग्रहण करे। मेरे विचार से उनका

[माननीय श्री के. सन्तानम्]

आशय यह है कि जहां कहीं राज्य के धन से प्राथमिक शिक्षा दी जाती हो वहां इस प्रकार की व्यवस्था हो। परन्तु मेरे विचार से इससे अल्पसंख्यकों को अथवा किसी विशेष भाषा-भाषी लोगों को प्राथमिक शिक्षा ग्रहण करने का परमाधिकार प्राप्त हो जायेगा, यद्यपि इस समय इस देश के लोगों को यह अधिकार प्राप्त नहीं है। निदेशक सिद्धान्तों में हमने यह प्रावहित किया है कि पन्द्रह वर्ष में सारे देश में प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था हो जानी चाहिये। परन्तु यह कोई भी नहीं कह सकता कि उस समय भी देश की आर्थिक तथा अन्य प्रकार की स्थिति ऐसी होगी कि प्राथमिक शिक्षा सभी लोगों को दी जा सकेगी। आज भारत में कोई भी व्यक्ति प्राथमिक शिक्षा के अधिकार की मांग नहीं कर सकता, क्योंकि केवल दस प्रतिशत लोग प्राथमिक शिक्षा पाते है। इसलिये मि. लारी का संशोधन स्वीकार करना सम्भव नहीं है, क्योंकि उससे कई प्रकार की कठिनाइयां उत्पन्न हो जायेंगी। यदि उसे स्वीकार कर लिया गया तो कोई भी व्यक्ति सर्वोच्च न्यायालय के सम्मुख जाकर कह सकता है कि उसके बच्चे को किसी विशेष भाषा में ही शिक्षा दी जानी चाहिये। यह व्यावहारिक नहीं है और मेरे विचार से उनका उद्देश्य भी यह नहीं है।

साथ ही, मेरे विचार से उन्होंने अपना तर्क उपस्थित करते समय जो कुछ कहा है, उसे सामान्य नीति निर्धारित करते समय ध्यान में रखना चाहिये। केन्द्रीय और प्रान्तीय सरकारों को यह निर्देश करना चाहिये कि जहां कहीं ऐसे लड़के-लड़कियों के समूह हों, जिनकी अपनी विशिष्ट भाषा हो, उनके लिये शिक्षालयों में उसी भाषा के माध्यम द्वारा शिक्षा देने का प्रबन्ध होना चाहिये। मुझे आशा है कि सारे देश में इसी नीति का अनुसरण किया जायेगा विशेषतया इसलिये कि यदि भाषा के आधार पर सीमाओं का पुनर्निर्धारण होगा तो सीमावर्त्ती सभी प्रदेशों में यह समस्या विकट रूप धारण करेगी। मुझे आशा हे कि एक-भाषा-भाषी प्रान्तों के आयोग के प्रतिवेदन में इस प्रकार का बुद्धिमत्तापूर्ण कोई प्रावधान होगा। जब प्रान्तों का भाषा के आधार पर पुनर्निर्माण हो तो उनके सम्मुख इस प्रकार की कोई कठिनाई उपस्थित न रहनी चाहिये। उदाहरण के लिये, यदि कोई तेलगू कहीं जाकर बसे तो उसके लिये कोई कठिनाई न होनी चाहिये। मैं कह चुका हूं कि यह एक बहुत ही कठिन और जटिल समस्या है और इसके सम्बन्ध में

मूलाधिकारों में विस्तृत रूप से उल्लेख नहीं हो सकता है। विधान में जितनी भी सुरक्षा की व्यवस्था की जा सकती है वह इस अनुच्छेद 23 में व्यवस्थित है। अन्य प्रकार के संरक्षणों का प्रबन्ध संसद् और प्रान्तों को कानून बनाकर करना होगा और मुझे आशा है कि यथासमय इस प्रकार की व्यवस्था की जायेगी।

***मि. ज़ैड. एच. लारी:** क्या मैं जान सकता हूं कि जिन सामान्य सिद्धान्तों की आपने चर्चा की है उन्हें व्यवहार मे लाने के लिये आप किन उपायों का सुझाव करते हैं?

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** मेरे अपने विचार हैं, परन्तु वे विधान में समाविष्ट नहीं किये जा सकते। जब हम ससद् में समवेत् होंगे तो मैं इस सम्बन्ध में अपने प्रस्तावों को सहर्ष उपस्थित करूंगा। उदाहरणार्थ, इन एक-भाषा-भाषी अल्पसंख्यक-वर्गों के हितों की रक्षा के लिये संसद् एक भाषा सम्बन्धी आयोग नियुक्त कर सकती है और वह आयोग देश में भ्रमण करके जहां कहीं शिकायतें हों उनको सुनकर अपने सुझाव उपस्थित कर सकता है।

***श्री ज़ैड. एच. लारी:** परन्तु क्या मैं आपको यह स्मरण करा सकता हूं कि संयुक्तप्रांत के शिक्षा-मंत्री के अनुसार यह एक प्रान्तीय विषय है और भारत सरकार के किसी संकल्प से उनका पथप्रदर्शन नहीं हो सकता है?

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** क्या मैं मि. लारी को स्मरण करा सकता हूं कि जहां कहीं लोग स्वायत्तशासी होते हैं तो यदि वे गलती भी करते हैं तेा उन्हें राज़ी करना होता है? अन्यथा किसी प्रान्तीय मंत्रिमण्डल पर अथवा केन्द्रीय मंत्रि-मण्डल को बाहर की किसी व्यवस्था अथवा आयोग को स्वीकार करने के लिये बाध्य नहीं किया जा सकता।

***उपाध्यक्ष:** मैं इस सभा में तर्क-वितर्क की आज्ञा नहीं दे सकता। श्री सन्तानम् अच्छा तो यह होगा कि आप अपनी जगह पर चले जायें। श्री विश्वनाथ दास।

***श्री विश्वनाथ दास** (उड़ीसा : जनरल): श्रीमान्, मेरी इच्छा तो यह थी कि मैं अपने माननीय सहकारियों को, मसौदा-समिति के सदस्यों को बधाई दे सकता, परन्तु मुझे खेद है कि मुझे यह कहना पड़ रहा है कि मैं इस अनुच्छेद के कुछ अंशों से सहमत नहीं हूं।

[श्री विश्वनाथ दास]

श्रीमान्, हमारी हमेशा से यह धारणा रही है कि दो प्रकार की संस्कृतियां है, प्राच्य और पाश्चात्य। किन्तु मसौदा-समिति के हमारे माननीय मित्रों ने केवल अनेक संस्कृतियों का ही नहीं बल्कि चिरस्थायी सांस्कृतिक क्षेत्रों का भी विचार उपस्थित किया है। उन्होंने इन सांस्कृतिक क्षेत्रों को चिरस्थायी बनाने की ही व्यवस्था नहीं की है किन्तु भारत के लिये, विभिन्न प्रान्तों के लिये भाषा-सम्बन्धी तथा लिपि-सम्बन्धी अनेक कठिनाइयों की सम्भावना उपस्थित कर दी है। पाकिस्तान के कारण भारत को शरणार्थियों की जटिल समस्या को हल करना है और हज़ारों-लाखों मित्रों को सारे भारत में बसाना है। मैं आपसे अनुरोध करता हूं कि आप उन प्रान्तों तथा रियासतों की कठिनाइयों की कल्पना करें जहां सिन्ध, सीमान्त प्रदेश, पूर्वी बंगाल ऐसे विभिन्न भाषा-भाषी लोगों को बसाना है। क्या थोड़ी संख्या में होने पर भी आप उन्हें अपनी भाषा और लिपि बनाये रखने का अधिकार देने जा रहे हैं?

मैं आपसे अनुरोध करता हूं कि आप इस प्रश्न पर शांतिपूर्वक तथा गम्भीरतापूर्वक विचार करें। क्या आपके पास इतना धन है कि थोड़े से लोगों के लिये भी जो कोई मांग की जाये, उसे पूरा करने के लिये आप व्यवस्था करें? जहां तक मेरा सम्बन्ध है मुझे इसमें कोई आपत्ति नहीं है, क्योंकि भारत में एक-भाषा-भाषी अल्पसंख्यकों तथा समूहों को सभी आवश्यक सुविधाएं प्रदान करने के लिये मैं किसी से कम चिन्तित नहीं हूं। परन्तु क्या आप ऐसी छूट देने जा रहे हैं जिसकी यहां मांग की गई है?

वह सम्भवत: सन् 1938 ई. का वर्ष था जब कि मद्रास के माननीय प्रधान मंत्री महोदय ने, जो इस समय इंद्रप्रस्थ की हमारे महान् पूर्वजों की गद्दी को सुशोभित करते हैं, मेरा मतलब हिज इक्सलेंसी श्री राजगोपालाचारी से है, वरहामपुर के रेल के स्टेशन पर उड़िया के सज्जनों के एक प्रतिनिधिमंडल से यह कहा था, "एक समय वह आयेगा जबकि आपको और मद्रास में रहने वाले आपके लोगों को प्रांत की भाषा सीखनी होगी। किसी भी प्रान्त के अल्पसंख्यक समुदाय को वहां की भाषा सीखनी ही है।"

किन्तु इस अनुच्छेद में एक भिन्न ही सिद्धान्त निर्धारित किया गया है। जिनको इस सम्बन्ध में जानकारी है वे यह कहेंगे कि आंध्र में ऐसे उड़िया हैं और उड़ीसा

में ऐसे आंध्र हैं, जो उस प्रान्त की भाषाओं को जानते हैं। यही दशा उन लोगों की है जो गुजरात, संयुक्तप्रान्त, बंगाल आदि प्रदेशों में निवास करते हैं। सज्जनों, क्या आप फिर उस समस्या को उग्र रूप देने जा रहे हैं? यह एक गम्भीर प्रश्न है और मैं चाहता हूं कि आप इस पर गम्भीरतापूर्वक विचार करें।

मैं अपने मित्र श्री जयपाल सिंह को इसके लिये धन्यवाद देता हूं कि उन्होंने अच्छी प्रकार बता दिया कि उनकी मांग का स्वरूप क्या होगा। मैं आपसे भी अनुरोध करता हूं कि आप प्रश्न के इस अंग पर विचार करें। ये आसान बातें नहीं हैं और दो-चार शब्द कह कर इनका समाधान नहीं हो सकता है। इसलिये मैं आपसे अनुरोध करता हूं कि आप इस सम्पूर्ण प्रश्न पर और भावी भारत में इसकी प्रक्रिया पर विचार करें।

***श्री टी. टी. कृष्णमाचारी** (मद्रास : जनरल): मैं यह औचित्य प्रश्न करना चाहता हूं कि क्या माननीय सदस्य महोदय अध्यक्ष-पद को सम्बोधित कर रहे हैं या एक सार्वजनिक सभा को?

***श्री विश्वनाथ दास:** मैं इस सम्बन्ध में अपने माननीय मित्र से अधिक जानता हूं क्योंकि मुझे विधान-मंडलों का उनसे अधिक अनुभव है। मेरा दुर्भाग्य यह है कि मैं इच्छा होते हुए भी आपकी ओर नहीं देख सकता। इसलिये स्थित्यनुसार मैं अपने मित्रों को सम्बोधित करने लगता हूं, चाहे नियमों में यह निर्धारित है कि मैं आपको सम्बोधित करूं। इसलिये इस सम्बन्ध में सीख देने का प्रयास न करना चाहिये।

***उपाध्यक्ष:** क्या आप कृपा करके अपने वक्तृता जारी करेंगे?

***श्री विश्वनाथ दास:** अनेक धन्यवाद, उन्हें सीख न दे कर अपने पर तथा मुझ पर कृपा करनी चाहिये। धार्मिक अल्पसंख्यक ब्रिटिश सरकार की देन हैं। ये धार्मिक अल्पसंख्यक हैं कौन? मेरा यह दावा है कि मेरे मुसलमान भाइयों का रक्त और मांस वैसा ही है जैसा मेरा। मैं उनका हूं और वे मेरे हैं। जहां तक उनकी संस्कृति का सम्बन्ध है हममें कोई अन्तर नहीं है। संस्कृति हमारी है। वह प्राच्य संस्कृति है। मेरी समझ में यह भी नहीं आता है कि भाषा के कारण किसी प्रकार की कठिनाई ही क्यों हो। जहां तक मुसलमान भाइयों का सम्बन्ध है, बंगाल के भूतपूर्व प्रधान-मंत्री जैसे व्यक्ति ने उड़ीसा आने पर मुझसे कहा था कि उड़ीसा

[श्री विश्वनाथ दास]

में कुछ मुसलमान उनसे भी अच्छी हिन्दी बोलते हैं। हमारे देश के हमारे मुसलमान मित्र ऐसे है। दक्षिण में आंध्र, तमिलनाडु और अन्य प्रदेशों में रहने वाले मुसलमान तेलगू और तामिल बोलते हैं न कि उर्दू। इस प्रकार उनकी भाषा और संस्कृति एक है। इसलिये मैं इस सभा के माननीय सदस्यों से अनुरोध करता हूं कि वे इस समस्या पर इस दृष्टि से भी विचार करें।

खण्ड (1) और (2) पर इतना कहने के पश्चात् अब मैं खण्ड (3) (ख) को उठाता हूं, जिसमें कहा गया है कि शैक्षिक संस्थाओं को सहायता के अनुदान करने में राज्य किसी विद्यालय के विरुद्ध विभेद इसी कारण से न करेगा कि वह धर्म, समुदाय अथवा भाषा पर आधृत किसी अल्पसंख्यक-वर्ग के प्रबन्ध में है। इसलिये इसे स्पष्ट रूप में समझ लेना चाहिये कि किसी सुदूर गांव में भी निवास करने वाला कोई अल्पसंख्यक-वर्ग अब अपनी भाषा में शिक्षा देने वाले विद्यालय के लिये विशेष अनुदान की मांग करेगा और वह उसे देना होगा, अन्यथा वह उच्च न्यायालयों और सर्वोच्च न्यायालय की शरण में जा सकता है। यह एक गंभीर बात है और मैं यह चाहता हूं कि आप इस प्रश्न पर बहुत गंभीरता से विचार करें।

इस सम्बन्ध में इतना कह कर मैं अब एक-भाषा-भाषी प्रान्तों के प्रश्न पर आता हूं, जिसकी ओर मेरे मित्र ने संकेत किया है। श्री जयपाल सिंह ने भाषा के आधार पर प्रान्तों के पुनर्निर्माण के सम्बन्ध में जो बातें कहीं उन्हें सुनकर मैं स्तब्ध रह गया। सर्वप्रथम एक-भाषा-भाषी प्रान्तों के लिये यह आन्दोलन उड़ीसा में छेड़ा गया था।

***उपाध्यक्ष:** मैं इसकी आज्ञा नहीं दे सकता कि आप एक-भाषा-भाषी प्रान्तों के प्रश्न की चर्चा करके सभा का समय लें।

***श्री विश्वनाथ दास:** मैं सभा का समय न लूंगा। परन्तु यह प्रश्न उठाया गया था और मैं उसका उत्तर दे रहा हूं। उड़ीसा में सर्वप्रथम एक-भाषा-भाषी प्रान्तों के लिये आन्दोलन छेड़ा गया। अन्य लोगों ने हमारा अनुसरण किया। इसलिये लोगों ने तथा भारत सरकार ने इस प्रश्न पर प्रश्न पर विचार किया और इसका फल यह हुआ कि भारत सरकार ने सन् 1911 ई. में अपने पत्रों में इस सिद्धान्त को स्वीकार किया कि भाषा के आधार पर प्रान्त निश्चित किये जायेंगे

और उनके ऊपर एक भारतीय संघ होगा और सन् 1921 ई. में कांग्रेस ने भी इस सिद्धान्त को स्वीकार कर लिया था। यद्यपि विदेशी सरकार की हमारी आकांक्षाओं के प्रति कोई सहानुभूति नहीं थी परन्तु उसने भी इस सिद्धान्त को स्वीकार किया था और भारत के सभी विचारकों ने, चाहे वे मुसलमान थे अथवा ईसाई अथवा किसी अन्य सम्प्रदाय के थे और चाहे उनकी विचारधारा कुछ भी थी, इस सिद्धान्त को स्वीकार किया था। इसलिये अब मेरे मित्र श्री जयपाल सिंह के लिये इस स्थिति की निन्दा करने का समय नहीं रह गया है। यदि आप आदिवासिस्तान चाहते हैं तो आप अवश्य उसकी मांग करें और जो उसे देना चाहते हैं वे स्पष्ट शब्दों में ऐसा कहें। मैं यहां विषयान्तर करने के लिये नहीं उपस्थित हूं। जो कठिनाइयां बताई गई हैं उन्हें केवल ध्यान में रखा जाये। मैं अपने मित्रों से अनुरोध करता हूं कि जो कठिनाइयां मैंने उनके सामने रखी हैं और इस सम्बन्ध में अनुच्छेद 23 को प्रवर्तन में लाने के लिये जो खर्च उठाना पड़ेगा उस पर गंभीरतापूर्वक विचार किया जाये। यद्यपि मैं इस सभा तथा अपने दल के बुद्धिमत्तापूर्ण मत को शिरोधार्य करूंगा परन्तु मैं यह स्पष्ट शब्दों मे कहना चाहता हूं कि मैं इन प्रावधानों में से कुछ के प्रति अपना विरोध प्रकट करता हूं। इस सम्बन्ध में मैं अपना तर्क उपस्थित कर चुका हूं।

*__श्री ओ.वी. अलगेसन__ (मद्रास : जनरल): श्रीमान्, इस खण्ड में नागरिकों की भाषाओं तथा उनकी लिपियों को सुरक्षित रखने का प्रयास किया गया है। यदि मुझे आज्ञा हो तो मैं यह कहूंगा कि कई प्रान्तीय लिपियों के मिट जाने की आशंका है और इसलिये यह आवश्यक है।

एक दृष्टिकोण यह भी उपस्थित किया गया है कि सभी प्रान्तीय लिपियों के स्थान में देवनागरी लिपि को रखा जाये। विश्वविद्यालयों के अध्यापकों के अखिल भारतीय सम्मेलन में, जिसका अधिवेशन हाल में दिल्ली में एक प्रख्यात राजनैतिक नेता के सभापतित्व में हुआ है, यह प्रस्ताव स्वीकार किया गया है कि सभी भारतीय भाषाओं के लिये एक ही लिपि हो। जब यह स्वीकार किया जायेगा कि जनसाधारण की भाषा हिन्दी से भारत की विभिन्न प्रान्तीय भाषाएं अधिक प्राचीन, अधिक उन्नत तथा साहित्य और भावव्यंजना की दृष्टि से अधिक धनी हैं, तो यह अनुभव किया जायेगा कि इस प्रकार की कार्यवाही से बहुत असंतोष और कटुता

[श्री ओ.वी. अलगेसन]

उत्पन्न होगी। यह कहा जाता है कि भाषा और लिपि सुसम्बद्ध नहीं हैं। मैं कह नहीं सकता। इस सम्बन्ध में प्रख्यात शिक्षाविद् ही सम्मति दे सकते हैं। मैं केवल यह कह सकता हूं कि प्रत्येक भाषा में कुछ ऐसी ध्वनियां होती हैं जो केवल उस प्राचीन लिपि द्वारा व्यक्त की जा सकती हैं जिससे उस भाषा का सम्बन्ध रहा हो। अन्य प्रकार यह सम्भव नहीं है।

महात्मा गांधी की भी किसी समय यही धारणा थी परन्तु उन्होंने तुरंत ही यह देख लिया कि देश की स्थिति इसके विपरीत है। हमारे देश में एक ही भाषा के लिये दो-दो लिपियां हैं। हिन्दी अथवा हिन्दुस्तानी के लिये दो लिपियां हैं अर्थात् अर्बी अथवा फारसी और देवनागरी लिपियां, इसलिये उन्होंने यह विचार त्याग दिया और विभिन्न प्रान्तीय लिपियों को सीखने लगे।

इन लिपियों और भाषाओं के सम्बन्ध में मैं तो यह कहूंगा कि भारतीय संघ की सरकार को सोवियत रूस के समान उदार नीति का अनुसरण करना चाहिये। रूस में उन्होंने एक-भाषा-भाषी अल्पसंख्यकों पर रूसी भाषा अथवा लिपि को आरोपित करने के विचार को नहीं अपनाया। इस प्रकार के आरोपण को वे रूसी अंध-निष्ठा के नाम से कहते हैं। मैं यह नहीं चाहता कि इस देश में देवनागरी अंध-निष्ठा को अपनाया जाये। सोवियत रूस में ऐसी भाषाएं थीं जिनकी अपनी लिपियां न थीं। उन्होंने बहुत आगे बढ़ के उनको लिपियां भी प्रदान कीं। उन्होंने रूसी लिपि नहीं दी, बल्कि लैटिन लिपि दी। इसी प्रकार भारत में भी ऐसी भाषाएं हैं जिनकी लिपियां नहीं हैं। इस सभा के एक प्रमुख सदस्य माननीय फादर डी' सौज़ा जिस कोंकानी भाषा को बोलते हैं उसकी कोई लिपि नहीं है। तूलू बोली की भी कोई लिपि नहीं है और मेरे विचार से कई आदिवासी भाषाओं की लिपियां नहीं हैं। इनमें से प्रत्येक भाषा के लिये सरकार को लिपि की व्यवस्था करनी चाहिये। इस खण्ड की व्याख्या उदारता से की जानी चाहिये और हमें ऐसी भाषाओं के लिये लिपि की व्यवस्था करनी चाहिये जिनकी अपनी लिपियां नहीं हैं। यदि इन भाषाओं के लिये देवनागरी लिपि निश्चित की गई तो मुझे इसमें कोई आपत्ति न होगी। परन्तु यह समझ में आने वाली बात नहीं हैं कि तामिल देवनागरी लिपि में लिखी जाये। आखिर इस प्रकार के प्रस्ताव का उद्देश्य क्या है? उद्देश्य तो यह है कि प्रान्तों के बीच एकता स्थापित की जाये। प्रान्तों के बीच एकता स्थापित करने के बजाय इससे इस प्रकार के प्रयास में बाधा पड़ेगी। इसलिये जब

हम शासन-कार्य के लिये सारे भारत के लिये एक भाषा निश्चित करने जा रहे हैं तो हमें लिपि के सम्बन्ध में अपनी इच्छानुसार बातें कह के अथवा विभिन्न प्रान्तीय लिपियों को मिटा देने की बात कह के स्थिति को अधिक संकटापन्न न बनाना चाहिये। मेरे विचार से प्रान्तीय लिपियों तथा भाषाओं को सुरक्षित करने तथा समुन्नत करने का प्रयास करके हम राष्ट्रीय एकता को अधिक अंश में स्थापित कर सकते हैं, तथा उसे सुदृढ़ बना सकते हैं। श्रीमान्, मैं सभा से सिफारिश करता हूं कि इस खण्ड को स्वीकार कर लिया जाये।

***माननीय पंडित गोविन्दबल्लभ पंत** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): श्रीमान्, मुझे इसका खेद है कि मुझे इस वादानुवाद में हस्तक्षेप करना पड़ा है। मेरा यह इरादा नहीं था। मैंने अपने ऊपर आत्म निरोध के नियम को लागू कर रखा है और जहाँ तक हो सका है मैंने सभा का समय नहीं लिया है। मैं यह चाहता हूं कि जो समय हमारे पास है उसमें अधिक से अधिक काम किया जाये और विधान को यथाशीघ्र स्वीकार कर लिया जाये। यदि एक वक्ता महोदय ने जिस प्रकार की बातें कहीं हैं उन्हें वे न कहते तो मैं आज इस मंच पर न आता। मि. लारी ने जो मत प्रकट किया है उसके कारण मैं कुछ बातें कहने के लिये बाध्य हूं और मेरा यह विचार है कि उनके भाषण से जो भ्रम उत्पन्न हो सकता है वह उनसे मिट जायेगा।

जहां तक इस खण्ड का सम्बन्ध है मैं इसका पूर्णत: समर्थन करता हूं। सौभाग्य से मि. लारी ने यह नहीं कहा है कि मेरे प्रान्त में कोई ऐसी बात की गई जो इस खण्ड के शब्दों अथवा इसकी भावना के विरुद्ध हो। इस सम्बन्ध में उन्होंने न कोई बात कही है और न कोई आरोप लगाया है...।

***श्री ज़ैड. एच. लारी:** मैं संशोधन पर बोल रहा था और मुझे अपने को उसी तक सीमित रखना था।

***माननीय पंडित गोविन्दबल्लभ पंत:** तो आप इसे स्वीकार करते हैं कि जहां तक संघीय शक्ति-समिति और मसौदा-समिति द्वारा स्वीकृत इस विशेष खण्ड का सम्बन्ध है, कोई ऐसी बात नहीं की जा रही है जो आपके मतानुसार भी इसकी शब्दावली अथवा भावना के विरोध में हो। उनका यह विचार है कि यह उनके उद्देश्य की पूर्ति के लिये पर्याप्त नहीं है और इसलिये वे इसमें संशोधन करना चाहते हैं।

***श्री ज़ैड. एच. लारी:** जी नहीं। मैं बहुत कुछ कह सकता था परन्तु मुझे अवसर नहीं मिला।

***माननीय पंडित गोविन्दबल्लभ पंत:** जहां तक उनके संशोधन का सम्बन्ध है, मेरे विचार से कई वक्ता उसकी आलोचना कर चुके हैं और उनके तर्क का खण्डन कर चुके हैं। मैं इसे आवश्यक नहीं समझता कि उन्होंने जो तर्क उपस्थित किये हैं उन्हें अधिक वज़नी बनाया जाये। परन्तु मैं कुछ वास्तविक बातों और कुछ सिद्धान्तों की ओर संकेत करूंगा जिनको ध्यान में रखना आवश्यक है। इस भारतीय संघ में हम सबका इस देश में निवास करने सभी नागरिकों के प्रति कुछ कर्त्तव्य है और हमने सभी कार्य इस प्रकार करने हैं कि हम, आज जो साधन उपलब्ध हैं, अथवा कल जो होंगे, उन सभी का अधिक से अधिक उपयोग कर सकें। मि. लारी का हमसे यह आशा करना उचित नहीं है कि हम करदाता के हितों को हानि पहुंचा कर किसी की सनक के अनुसार काम करें। हमारे देश में बहुत से लोग निरक्षर हैं और उन्हें कम से कम प्राथमिक शिक्षा की सुविधा प्रदान करनी है। सारे देश में प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था करने के लिये करोड़ों रुपयों की आवश्यकता होगी। आखिर हमारे विद्यालय किस प्रकार स्थापित हों और किस प्रकार वे चलाये जायें? यदि प्रत्येक विद्यालय में नागरी जानने वाले और उर्दू जानने वाले दो प्रकार के अध्यापकों को रखना आवश्यक हो, चाहे इन भाषाओं में दिलचस्पी रखने वाले विद्यार्थियों की संख्या कुछ भी हो, तो क्या आर्थिक दृष्टि से हमारे लिये इस प्रकार की व्यवस्था करना सम्भव है? यदि इस प्रकार की नीति का अनुसरण किया जाये तो अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की बात तो दूर रही, हम सारे देश में प्राथमिक शिक्षा की भी व्यवस्था अनन्त काल तक न कर सकेंगे। यह स्पष्ट है कि आपको प्रत्येक प्रदेश की स्थिति की परीक्षा करनी होगी और फिर ऐसी व्यवस्था करनी होगी जिससे अधिक से अधिक लाभ हो सके।

श्रीमान्, जहां तक मेरे प्रान्त का सम्बन्ध है मेरे विचार से धर्म के आधार पर कहीं भी भाषा-सम्बन्धी विभेद नहीं है। (**माननीय सदस्य:** कहीं नहीं)। चाहे हिन्दी को लीजिये अथवा हिन्दुस्तानी को अथवा उर्दू को, कई हिन्दू ऐसे हैं जो तथाकथित उर्दू बोल सकते है और उर्दू लिख सकते हैं और उनमें से कुछ तो ऐसे हैं जो केवल उर्दू ही लिख सकते हैं। बहुत से मुसलमान ऐसे हैं, विशेषतया गांवों में, जो केवल देवनागरी में लिखते हैं और केवल हिन्दी बोलते हैं और अन्य किसी भाषा को नहीं जानते।

***मौलाना हसरत मोहानी:** गांवों में हिन्दी कोई नहीं बोलता।

***उपाध्यक्ष:** यह एक विशेषाधिकार प्राप्त व्यक्ति का विघ्न है। आप उसकी ओर ध्यान न दीजिये।

***माननीय पंडित गोविन्दबल्लभ पंत:** आप इस सम्बन्ध में निश्चित रहें कि अध्यक्ष पद से मुझे आश्वासन मिलने के उपरान्त मैं आपकी बातों की ओर ध्यान देने नहीं जा रहा हूं। (*हंसी*) मैं यह कह रहा था कि यदि आप इसे ध्यान में रखें कि किसी विशेष धर्म के अनुयायियों की कोई विशेष भाषा नहीं है तो किसी अल्पसंख्यक-वर्ग के होते हुए, अथवा उसके सम्बन्ध में, भाषा का प्रश्न ही नहीं उठता। हिन्दुओं की अपनी कोई भाषा नहीं है और मुसलमानों की अपनी कोई भाषा नहीं है। (**माननीय सदस्य:** वाह वाह)। विशेषतया जहां तक प्राथमिक शिक्षा और उन प्राथमिक कक्षाओं का सम्बन्ध है जहां केवल प्रारम्भिक शिक्षा दी जाती है। मैंने जिस सिद्धान्त को सभा के सम्मुख रखा है उसके बारे में किसी प्रकार का मतभेद हो ही नहीं सकता। उन विद्यालयों में केवल प्रारम्भिक विचार प्रतिपादित किये जाते हैं और वे इस प्रकार प्रतिपादित किये जाते हैं कि उन्हें साधारणतया सभी लोग समझ सकें। इसलिये किसी अल्पसंख्यक-वर्ग के लिये हानिकर किसी बात के करने का प्रश्न ही नहीं उठता।

ऐसे लोग हैं जो हिन्दी जानते हैं परन्तु उनके बच्चे उर्दू सीखते हैं। ऐसे हिन्दू हैं जो उर्दू जानते हैं और जैसा कि मैं कह चुका हूं ऐसे मुसलमान हैं जो हिन्दी और नागरी लिपि जानते हैं और केवल नागरी लिपि और हिन्दी ही जानते है। इसलिये मूलाधिकारों पर विचार-विमर्श होते समय इस प्रश्न को साम्प्रदायिक प्रश्न अथवा अल्पसंख्यकों के प्रश्न के रूप में उपस्थित करना इसे गलत ढंग से उपस्थित करना है। मेरा यह निवेदन है कि इस प्रसंग में यह प्रश्न उठता ही नहीं।

इसके अतिरिक्त मि. लारी ने कुछ बेढब बातें कही हैं। उन्होंने यह कहा है कि लखनऊ और इलाहाबाद में कोई जगह ऐसी नहीं है जहां मुसलमान उर्दू में प्राथमिक शिक्षा पा सकते हैं। इन दोनों स्थानों में इस्लामिया स्कूल हैं, मदरसे हैं, सरकारी स्कूल हैं और मुस्लिम स्कूल तथा मुस्लिम कालेज हैं और वहां मुसलमानों के सैकड़ों लड़के शिक्षा पा रहे है। मेरी समझ में नहीं आता कि मि. लारी ने इतने गलत बयान की जिम्मेदारी अपने ऊपर कैसे ले ली।

***श्री ज़ैड. एच. लारी:** यहां मेरे पास बुनियादी कालेज के प्रिंसिपल की ही चिट्ठी है। किसी सरकारी अथवा नगर-समिति के स्कूल में इस प्रकार का प्रबन्ध नहीं है।

***माननीय पंडित गोविन्दबल्लभ पंत:** मैं इस विषय पर आ रहा हूं। थोड़ा धैर्य रखिये। जहां तक मुझे ज्ञात है इस वर्ष हमारे प्रान्त के स्कूलों और कालेजों में मुसलमान लड़कों की संख्या में कोई कमी नहीं हुई है। मैं यह भी कहूंगा कि इस समय जो प्रणाली प्रयुक्त है उससे किसी वर्ग के विद्यार्थियों को किसी प्रकार की असुविधा होने के बारे में साधारणतया कोई शिकायत नहीं आई है। मि. लारी का हमारे शिक्षा-मंत्री से कुछ वाद-विवाद हुआ और कुछ पत्र समाचार-पत्रों में प्रकाशित किये गये। मि. लारी के मत का मेरे प्रान्त के कुछ सम्मानित मुसलमानों ने खण्डन किया और विधान-मंडल के कुछ सदस्यों का भी उनसे मतभेद रहा और उन्होंने अपने विचार समाचार-पत्रों के स्तम्भों में व्यक्त किये। सम्भवत: वे यह जानते हैं। सम्भवत: उन्होंने मि. इस्माइल अहमद के लेख को पढ़ा था। वे यह बात नहीं कहते हैं। यह उचित नहीं है कि केवल उन्हीं बातों को देखा जाये जो आपने पसंद की हों। (*हंसी*) इससे यह ज्ञात होता है कि सार्वजनिक प्रश्नों की वे किस प्रकार परीक्षा करते हैं और किस प्रकार उन पर अपना मत निश्चित करते हैं।

प्राथमिक विद्यालयों में लड़कों को मातृभाषा में शिक्षा दी जाती है। हिन्दू, मुसलमान और सभी लड़कों की हमारे प्रान्त में बहुत कुछ एक ही मातृभाषा है। किसी प्रकार का अन्तर नहीं है। पिछले दिनों में जिनके माथे पर प्रथक्करण का भूत सवार रहा है, उसे वे अब भी नहीं उतार सके हैं। (**माननीय सदस्य:** वाह वाह)। यह दिखाई देता है कि 'दो राष्ट्रों' का भूत अब भी कहीं छिपा हुआ है और वह इस सम्मानित सभा के भवन के भी किसी कोने में वर्तमान है। अन्यथा यहां इस प्रकार का भय उपस्थित नहीं किया जाता।

इस सम्बन्ध में मुझे मि. लारी का एक पत्र मिला और मैंने अपने डिप्टी सेक्रेटरी और डिप्टी डायरेक्टर मि. इबादुर रहमान खां से बातचीत की। डिप्टी डायरेक्टर से मुझे ज्ञात हुआ कि जो प्रबन्ध किया गया है वह पूर्णतया संतोषजनक है। इस स्थिति में मेरे विचार से मुझे उन लोगों के परामर्श तथा सूचना पर विश्वास

करना चाहिये, जिनको प्रान्त के प्रत्येक स्कूल के बारे में मि. लारी से अधिक जानकारी है।

मैं माननीय सदस्यों को यह भी सूचित करना चाहता हूं कि हम इस समय भी ऐसे इस्लामिया स्कूलों और मदरसों को अनुदान के रूप में बहुत-सा रुपया दे रहे हैं जिनमें केवल मुसलमान विद्यार्थियों का प्रवेश हो सकता है। इसलिये यहां यह आरोप लगाना कि मुसलमान विद्यार्थियों के साथ विभेद बरता जा रहा है, उचित नहीं है और इसे किसी प्रकार उदार मत तो कहा ही नहीं जा सकता।

अब जहां तक मि. लारी के लड़के का सम्बन्ध है, मैंने वास्तविक बातों का पता लगाने का प्रयास किया और मुझे यह बताया गया कि उस कक्षा में बहुत कम लड़के उर्दू लिपि को चाहते थे। उनमें से सब लड़के कुछ को छोड़ कर—सम्भवत: केवल मि. लारी के लड़के को छोड़कर—वहां के प्रबन्ध से संतुष्ट थे। मि. लारी बता सकते हैं कि उस कक्षा में कितने लड़के ऐसे थे जो उनसे सहमत थे अथवा जिनके संरक्षक उनसे सहमत थे और जो यह चाहते थे कि...

***श्री ज़ैड. एच. लारी:** सभी मुझ से सहमत थे परन्तु प्रिंसिपल ने कहा "इस प्रकार की कोई बात नहीं हो सकती।" "किसी प्रकार की छूट देना सम्भव नहीं है।

***माननीय पंडित गोविन्दबल्लभ पंत:** जहां तक मुझे ज्ञात है उस कक्षा में केवल उन्हीं का लड़का पृथक् प्रबन्ध चाहता था। (*हंसी*) इसमें सन्देह नहीं कि इलाहाबाद में ऐसे स्कूल हैं जहां नागरी लिपि, जो प्रान्त की राष्ट्रीय-लिपि स्वीकार की गई है, प्रयोग में है।

वे अपने लड़के को किसी अन्य इस्लामिया स्कूल अथवा किसी ऐसे स्कूल में भेज सकते थे जहां उर्दू लिपि प्रयोग में है और जहां उसी प्रकार की शिक्षा दी जाती है, जिसे मि. लारी पंसद करते है। क्या वे इस सभा से इस प्रकार की व्यवस्था स्वीकार करने की आशा करते हैं कि जहां ऐसा एक विद्यार्थी या दस विद्यार्थी हों, तो वहां दो अध्यापक-वर्ग हों; एक नौ सौ अथवा एक हजार विद्यार्थियों के लिये और एक उन दस लड़कों के लिये? यदि यह बात है ते इसका खर्च कहां से पूरा किया जायेगा? हम करदाता को इसे इस बात को मानने के लिये कैसे समझायेंगे? इसके अतिरिक्त यह भी ध्यान में रखने योग्य है कि

[माननीय पंडित गोविन्दबल्लभ पंत]

केवल ऐसे लोग नहीं हैं जो विद्यालयों में इस लिपि को अथवा क्लिष्ट उर्दू को चाहते हैं किन्तु बड़े शहरों में महाराष्ट्री, गुजराती और अन्य लोग भी पर्याप्त संख्या में होते हैं। यदि पांच या दस बंगाली लड़के हों या पांच या दस गुजराती लड़के हों तो क्या हम ऐसे पृथक् अध्यापक-वर्ग की व्यवस्था करें जो उन लड़कों को बंगाली, अथवा मराठी अथवा गुजराती अथवा तेलगू में शिक्षा दे सकें? इसे कोई भी स्वीकार नहीं कर सकता है और वास्तव में उन लोगों ने कभी इस प्रकार की मांग भी नहीं की है। उन्होंने जैसी स्थिति है उसे स्वीकार किया है और वे हमेशा जो भी प्रबन्ध किया गया है उससे संतुष्ट रहे हैं। अब यदि कोई व्यक्ति यहां इस पर ज़ोर दे कि यदि कोई विद्यार्थी उर्दू को श्रेष्ठ समझता है तो उसके लिये प्रत्येक स्कूल में उस लिपि में तथा उस भाषा में शिक्षा देने के लिये पृथक् अध्यापकों का प्रबन्ध किया जाये तो मेरे विचार से सरकार उसकी इच्छा को पूरा न कर सकेगी। किसी भी सरकार के लिये ऐसी व्यवस्था करना सम्भव नहीं है और जहां तक मुझे ज्ञात है मि. लारी ने भी यह संशोधन स्वीकार किया है कि यह प्रबन्ध तभी किया जाये जब कहीं ऐसे विद्यार्थी पर्याप्त संख्या में हों। मेरे विचार से उस संशोधन को काज़ी सय्यद करीमुद्दीन ने उपस्थित किया था और उसमें यह कहा गया था कि:

"यदि इस प्रकार के विद्यार्थी पर्याप्त संख्या में उपस्थित हों तो"।

हमने भी यही निर्देश किया है कि जहां कहीं इस प्रकार के विद्यार्थी पर्याप्त संख्या में हों तो उनके लिये प्रबन्ध किया जाये। परन्तु जहां वे पर्याप्त संख्या में नहीं हैं वहां हम इस प्रबन्ध के खर्च को नहीं उठा सकते। क्या इससे भी न्यायपूर्ण अथवा उदार और कोई बात हो सकती है? यहां जिस मूलभूत अनुच्छेद को हम स्वीकार करने जा रहे हैं उसके अनुसार हमारे लिये यह आवश्यक नहीं है कि हम इस प्रकार की कोई व्यवस्था करें। उसके अनुसार किसी ऐसी भाषा बोलने वाले लोगों को, जो राष्ट्रभाषा अथवा राजभाषा से भिन्न हो, अपनी भाषा को सुरक्षित रखने की स्वतन्त्रता दी गई है। इससे सरकार के लिये यह आवश्यक नहीं हो जाता कि उनके लिये विशेष व्यवस्था की जाये। परन्तु हमने इससे कहीं आगे बढ़कर उन्हें विशेषाधिकार दिये हैं। हमने उनके लिये आवश्यक प्रबन्ध किया है। आज हज़ारों ऐसे लड़के शिक्षा पा रहे हैं और हम उनकी शिक्षा पर बहुत बड़ी धन-राशि व्यय कर रहे हैं। हम चाहते हैं कि उनकी शिक्षा को प्रोत्साहन मिले और

हम आज से भी अधिक संख्या में विद्यार्थियों को आकर्षित करना चाहते हैं और यह भी चाहते हैं कि उनके लिये यथासम्भव सुविधा हो, परन्तु कोई भी सरकार एक सीमा के आगे नहीं बढ़ सकती है। जब प्रान्त में प्रत्येक व्यक्ति को यथासम्भव सुविधा प्रदान करने के लिये और लोगों के प्रत्येक वर्ग को उचित स्थान देने के लिये सच्चे हृदय से जो प्रयास किया गया है उसकी उपेक्षा करके बिना समझे बूझे दोषारोप किये जाते हैं तो मैं कभी बड़ी कठिनाई में, आपत्ति में और बहुत कुछ खिन्नावस्था में पड़ जाता हूं। हमें आशा है कि इस प्रकार के अनुत्तरदायी वक्तव्य अब न दिये जायेंगे और इससे भी अधिक आशा इसकी है कि यहां कोई व्यक्ति ऐसी बातों से भ्रम में न पड़ेगा जिनकी पुष्टि वस्तुस्थिति से नहीं होती है और जो गलत भी होती हैं तथा जो राज्य के संरक्षण में नागरिकों के विशाल समुदाय के प्रति राज्य के कर्त्तव्य की उपेक्षा करती है। यह एक बड़े दुर्भाग्य की बात है कि इस प्रसंग में भाषा के प्रश्न को इस ढंग से उपस्थित किया जाये कि वह जैसे कोई साम्प्रदायिक प्रश्न हो। इससे उस उद्देश्य का साधन न होगा जिसकी प्राप्ति के लिये मैं यथाशक्ति सहायता देना चाहता हूं, परन्तु इससे हमारे मार्ग में बाधा ही पड़ेंगी। मुझे आशा है कि भविष्य में ऐसे प्रश्नों पर अधिक सावधानी से विचार किया जायेगा।

***एक माननीय सदस्यः** अब प्रस्ताव पर मत लिया जाये।

***उपाध्यक्षः** बहस समाप्त करने का प्रस्ताव उपस्थित हो चुका है और मैं अब डॉ. अम्बेडकर से बोलने के लिये कहता हूं। किन्तु क्या आप अधिक बहस करना चाहते हैं?

***माननीय सदस्यः** जी नहीं।

***मौलाना हसरत मोहानीः** श्रीमान्, मेरे लिये अपवाद किया जाये। यदि आप मुझे बोलने के लिये कुछ समय दें तो मुझे हर्ष होगा। मैंने एक संशोधन की सूचना दी थी परन्तु डॉ. अम्बेडकर ने मुझे ठग लिया। कृपा करके मुझे अपनी बात कहने दीजिये।

***उपाध्यक्षः** अच्छी बात है। कृपया माइक्रोफोन पर आइये।

मौलाना हसरत मोहानी: जनाब आली, मेरा इरादा यहां पर सिर्फ एक तरमीम पेश करने का था। वह नम्बर 691 की तरमीम थी। अम्बेडकर साहब ने जो रखा था उसमें तरमीम करने के लिए थी। लेकिन इसके बाद जब और अमेंडमेंट पेश हुए तो उसमें सबसे पहला जो अमेंडमेंट पेश किया मिस्टर लारी ने, वह अमेंडमेंट नं. 676 में। उसकी भी मैं तहेदिल से ताईद करता हूं इसकी वजह यह है कि जैसा कि लारी साहब ने अपने बयान में कह दिया था कि जो यहां पर सब-कमेटी बनी थी, इस हाउस में फंडामेण्टल राइट्स के लिए, उसने इस बात को मुत्तफिका तौर पर तय कर लिया था और यह उसूल करार दिया था कि:

"Minorities in every Unit shall be protected in respect of their script and culture and no laws regulating them may be enacted." इसमें यह बात पूरी तौर पर आ गई। मेरी समझ में नहीं आता कि अम्बेडकर साहब की कमेटी ने इसके खिलाफ एक नया उसूल क्योंकर जारी करके अपने ड्राफ्ट में बिलकुल एक नई चीज़ पेश कर दी। इसके ऊपर लारी साहब ने बहुत ऐतराज किया था। मैं तो सीरियस प्रोटेस्ट करता हू कि ऐसा उनको नहीं करना चाहिए था। वह कमेटी में पास हुआ मई सन् 1947 में और इस हाउस ने भी उसको मंजूर किया।

अब आप देखिए कि इसके मुतल्लिक जो तरमीम मैंने पेश की थी। उसके बारे में मैं कुछ कहूंगा। इस सिलसिले में जो चन्द बातें पेश आ गईं और मेरे सूबे के वज़ीरेआज़म पंत साहब ने और मिस्टर सन्तानम् ने जो चन्द बातें इसके मुतल्लिक कही हैं, मैं उसका जवाब मुख्तसर तौर पर देना चाहता हूं और वह यह है कि मिस्टर सन्तानम् साहब ने यह कहा था कि लारी साहब की जो तरमीम थी, 676 वाली, उसमें लाज़िमी तौर पर हमारी प्रोटेक्शन होनी चाहिए। लैंग्वेज और स्क्रिप्ट को भी उन्होंने कहा इसमें मौजूद है कि हम 15 बरस के बाद जो कुछ तय होगा तब हम इसका ख्याल करेंगे। फिर जब लारी साहब ने यह ऐतराज़ किया था कि हमारे सूबे के लिए क्या होगा; वहां पर उन्होंने कह दिया है हम सेण्ट्रल गवर्नमैंट के फैसले को मानते ही नहीं कि एजुकेशन प्रोविन्सियल सब्जैक्ट है। इसलिए आपकी एडवाइज़री कमेटी ने उसको नहीं माना और नहीं मानती है। तो

इसका भी जवाब उन्होंने दिया कि फिर आपको अपने सूबे की मैजोरिटी की खुशामद करनी होगी। वह ख्याल करेंगे, मैं यह कहता हूं कि पन्द्रह बरस जो उन्होंने कहा है वह किस ख्याल से। मैं बताना चाहता हूं कि इस वक्त तक कि स्टेटस को हमारे यू.पी. में क्या रहा है। अंग्रेज़ जहां रहते थे उन्होंने अंग्रेज़ी को रखा, लेकिन सिर्फ हायर एजुकेशन अंग्रेज़ी में होती थी। इन्साफ की बात तो यह थी कि 'Give the devil its due' । इतनी मैं उनकी तारीफ करूंगा कि उन्होंने अंग्रेज़ी को सिर्फ हायर एजुकेशन के लिए बनाया था। जहां तक सेकेंडरी और प्राइमरी का ताल्लुक था उन्होनें यह सिस्टम जारी कर दिया था जो हमारे सूबे में अब तक जारी था। वह क्या था? एक वर्नाक्यूलर ऑफ एजुकेशन वर्नाक्यूलर मिडिल की अलग थी जो अंग्रेज़ी के ज़रिये से मीडियम ऑफ इंसट्रक्शन होता था। इसके लिए हाई स्कूल होते थे। यानी जो लोग मीडियम ऑफ इंसट्रक्शन हायर एजुकेशन में अंग्रेजी लेना चाहते थे यह हाई स्कूल मीडियम ऑफ इंसट्रक्शन अंग्रेज़ी में लेते थे। जो लोग यह नहीं चाहते थे उनके लिए हर जिले में, हर मुकाम पर वर्नाक्यूलर स्कूल्स मौजूद थे। पन्त साहब ने जो कहा कि हम डबल और तीन गुना खर्च कहां से करेंगे। अब तक कहां से करते थे? आपके यहां वर्नाक्यूलर अब तक जारी था या नहीं? हर कस्बे में, हर गांव में, हर जिले में और वहां यह था या नहीं कि जो लोग जिनकी मदरटंग उर्दू थी और वह उर्दू स्क्रिप्ट के साथ सेकेंडरी एजुकेशन लेना चाहते थे, मिडिल तक वह उर्दू पढ़ते थे। जो कहते थे कि हिन्दी हमारी मदरटंग है। अगरचे यह फैक्ट है कि वह हिन्दी में बोलते थे। जिसको आगे चल कर के अपना इंटरमीडियेट और बी.ए. और अंग्रेज़ी पढ़नी होती थी वह जाकर हाई स्कूल के दर्जे में पढ़ते थे। मेरा कम से कम मुतालबा अपने सूबे की हुकूमत से यह है कि अलावा इस सवाल के कि आप यूनियन लैंग्वेज़ क्या मुकर्रर करेंगे मुझको इससे कोई वास्ता नहीं है। चाहे आप इसको इन्टरप्रोविन्सियल लैंग्वेज़ हिन्दुस्तानी रखें या हिन्दी रखिये या संस्कृत रखिये। चाहे जो जी चाहे कीजिये। यह सवाल मीडियम ऑफ इंसट्रक्शन का और लैंग्वेज़ का कि किस प्रोविंस की क्या लैंग्वेज़ हों, बिलकुल डिस्टिंक्ट बनाइये। आप यू.पी. के अन्दर अगर हिन्दी बनाते हैं तो मुझे ऐतराज़ नहीं, लेकिन जहां तक मीडियम ऑफ इंसट्रक्शन का ताल्लुक है वह जब तक कि हमारी उर्दू मदरटंग है हमारा यह हक है और फन्डामैंटल राइट्स में से है। आज वह स्टेट से तकाज़ा करेंगे कि हम मादरी ज़बान में और मादरी स्क्रिप्ट में तालीम हासिल करेंगे। तो आपको गवर्नमैंट स्कूल्स में इसका बन्दोबस्त करना पड़ेगा और अगर आप यह नहीं करेंगे तो...

एक माननीय सदस्यः पाकिस्तान चले जाइये।

मौलाना हसरत मोहानीः आप जाइये। जो हिन्दुकुश से आये हैं वहां जाकर बसें। पंजाब से आप आये हैं। हम क्यों जाये। हम सेंट्रल एशिया से आये हैं।

***उपाध्यक्षः** एक वृद्ध सज्जन को चिढ़ा कर माननीय सदस्य क्रूरता का ही परिचय दे रहे हैं।

मौलाना हसरत मोहानीः यह बात है तो मैं सन्तानम् साहब और पन्त साहब दोनों को यह जवाब देता हूं कि उन्होंने भी यही कहा है कि फंड कहां से आयेगा। हम दो इन्तज़ाम कहां से करेंगे। एक लड़का ही हो तो वह कैसे होगा और अभी उन्होंने जो यह कहा कि गांव-गांव के मुसलमान हैं वह भी हिन्दी बोलते हैं, वह बिलकुल गलत है। मैं चैलेंज करता हूं पन्त साहब को, और किसी उस शख्स को, यू.पी. के जिस कोने में जाकर देख लें, मैं चैलेंज करता हूं कि वहीं जाकर देख लें कि किसी गांव के मुसलमान से बात करें, हिन्दी में किसी सब्जैक्ट पर उससे लिखा लें तो मैं कहता हूं कि वह सेंट परसेंट उर्दू बोलेंगे। यह दूसरी बात है कि हम 'खुशी' कहेंगे और वह 'खुसी' कहेंगे, हम 'हाफ़िज' कहेंगे वह 'हाफिज़' कहेंगे हम 'ग़रीब' कहेंगे और वह 'गरीब' कहेंगे, हम 'नक़द' कहेंगे और वह 'नगद' कहेंगे। इसके सिवाय 'कुछ नहीं'। हम तो जब मानें कि आपके गांव वाले जिनको आप कहते हैं कि उनकी मदरटंग हिन्दी है, आप और हम गांव में जाकर पूछें, आप कहेंगे कि बरसात शुरू हो गई है वह कहेंगे कि बरखा शुरू हो गई है। यह हो सकता है, लेकिन यह तो उर्दू ही है। हम तो जब मानें कि वह इसका जवाब दें कि बरखा आरम्भ हो गई है। अगर वह आरम्भ हो गई है कहते हैं तब हिन्दी हो सकती है। शुरू कहें तब तो यह उर्दू ही है। मेरा यह क्लेम है कि यू.पी. के सेंट परसेंट लोग उर्दू बोलते हैं और जो कहते हैं कि वहां के मुसलमानों की ज़बान हिन्दी है, बिल्कुल गलत है। मैं चैलेंज करता हूं, इसके लिए आप रेफरेंडम कर लीजिये और अगर आप यह नहीं कर सकते हैं तो आपका देहाती प्रोग्राम जो आल इंडिया रेडियो से ब्राडकास्ट होता है, उसकी लैंग्वेंज़ से पता चल जायेगा कि वह 'खुशी' कहते है या 'खुसी' कहते हैं। अगर इन देहातियों की जबान में कोई संस्कृत का लफ़्ज आ जाये तो आप कह सकते हैं कि देहात

की जबान हिन्दी है। लिहाज़ा मैं आपको चैलेंज करता हूं और आपको कोई हक नहीं है यह कहने का कि हमारे यू. पी. के गांवों की ज़बान हिन्दी है। यह मैंने लारी साहब के अमेंडमेंट के मुताल्लिक कहा है। मैं डॉक्टर अम्बेडकर साहब से अपील करूंगा कि वह अपने उस फैसले का लिहाज़ करें जो इस हाउस ने किया था और जो हमारी फंडामैंटल राइट्स की कमेटी ने किया है और वह उसको मंजूर करें यानी 676 नम्बर का जो अमेंडमेंट लारी साहब ने पेश किया है, उसको यह मंजूर करें। यह आपकी खुशी है कि आप उसको मंजूर करें या न करें, इसलिए कि आपकी मैजोरिटी आपके साथ है और एक पार्टी की जमात है।

*[मैं इस तरमीम की मुखालिफत करता हूं। वोट ले लीजिये। इस कांस्टिट्यूएंट असेम्बली का ढकोसला खड़ा करने की क्या ज़रूरत है?]

***उपाध्यक्षः** मैं आपको यह शब्द प्रयोग करने की आज्ञा नहीं दे सकता। (*विघ्न*) कृपया अपनी जगह पर बैठ जाइये। मैं बिना आपकी सहायता के भी सभा में व्यवस्था बनाये रख सकता हूं। मौलाना साहब, आप दस मिनट ले चुके है। मैं आपको केवल दो मिनट और देता हूं।

***मौलाना हसरत मोहानीः** में सिर्फ पांच मिनट और चाहता हूं। मैं पांच मिनट में खत्म कर दूंगा।

***उपाध्यक्षः** अच्छी बात है।

मौलाना हसरत मोहानीः अब मैं उस तरमीम के मुतल्लिक कहना चाहता हूं जो मैंने पेश की थी और वह तरमीम मैंने डॉक्टर अम्बेडकर की तरमीम पर दी थी। उसको अम्बेडकर साहब ने पेश नहीं किया और नल एन्ड वाइड कर दिया। मैं सिर्फ इसके मुतल्लिक बताना चाहता हूं।

डॉक्टर अम्बेडकर साहब ने जो 691 नम्बर का अमेंडमेंट पेश किया था, मैंने बहुत समझबूझ कर अपनी तरमीम उस तरमीम के साथ रखी थी कि आम तौर पर यही होता है कि उनकी तरमीम या कोई चीज़ हमेशा मंजूर हो जाती है। उसके साथ मेरी भी तरमीम मंजूर हो जायेगी। हमारे सदर साहब ने, जिनको यह अख्तियार दे दिया गया है कि जो कुछ वह चाहें पेश होने दें, और जो न चाहें वह पेश नहीं हो सकता है। लिहाज़ा यह अमेंडमेंट यानी 691, 692, 693, 694,

[मौलाना हसरत मोहानी]

696, 697, 698 सब एक ही तरह के हैं। इसमें से उन्होंने सिर्फ 691 को सेलेक्ट करके यह हक दे दिया कि सिर्फ यही पेश हो सकता है। यह कौन से इन्साफ की बात है? आप क्यों नहीं पेश करने देंगे? और वह क्यों नहीं पेश करते? तो मैं समझता हूं कि इसमें बात यह थी कि इसमें माइनोरिटीज़ को पूरा हक मिल रहा था, इसलिए इसे पेश नहीं किया।

*[यह बात साफ कर दी गई है कि हरेक अहम अकलियत को अपनी मादरी ज़बान और रस्मुलखत में तालीम पाने का हक हासिल होगा।]

पंडित ठाकुरदास भार्गवः मौलाना साहब, क्या मैं अर्ज करूं कि दफा 23 (2) में कोई जिक्र लैंग्वेज़ और स्क्रिप्ट का नहीं है, बल्कि यह तालीमी इदारों के दाखिले के मुताल्लिक है।

***उपाध्यक्षः** पंडित ठाकुरदास भार्गव, आपको अध्यक्ष पद को सम्बोधित करना चाहिये। मुझे खेद है कि मुझे आपको यह बताना पड़ रहा है। मौलाना साहब, मैं आपको पांच मिनट और दे चुका हूं।

मौलाना हसरत मोहानीः *[जनाब, दो-तीन जुमले बोल कर मैं खत्म कर रहा हूं।] लिहाज़ा मैं यह कहना चाहता हूं कि एडवाइज़री बोर्ड में भी यह फैसला किया था कि हर शख्स को अपनी मादरी ज़बान पढ़ने का हक है और यूनिवर्सिटी एजुकेशन में भी यह चीज़ तय पा गई है कि मादरी ज़बान रहेगी। लिहाजा आपको कोई हक नहीं है कि आप इसको अवाइड कर दीजिये।

ज़बान और रस्मुलखत का बहुत ही अहम मामला है। टर्की की तबाही का बायस महज़ उनकी वह जबरदस्ती हुई जिसकी वजह से उन्होंने अपनी ज़बान ठूंसना चाही थी। जिस तरह उनकी हुकूमत खत्म हो गई, आप भी हुकूमत नहीं कर सकेंगे।

***श्री सत्यनारायण सिन्हा** (बिहार : जनरल): श्रीमान्, अब प्रस्ताव पर मत लिया जाये।

***उपाध्यक्ष:** दो प्रार्थनाएं और की जा चुकी हैं। मेरे विचार से अब मुझे अधिक बहस की आज्ञा न देनी चाहिये। डॉ. अम्बेडकर।

***पंडित हृदयनाथ कुंजरू** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): श्रीमान्, यह एक महत्त्वपूर्ण विषय है। क्या आप रियायत करके मुझे बोलने की आज्ञा दे सकते हैं?

***उपाध्यक्ष:** हम हमेशा आपका भाषण सुनने के लिये तैयार रहते हैं। हमें तो खेद इसी का है कि आप प्राय: नहीं बोलते हैं।

***पंडित हृदयनाथ कुंजरू:** उपाध्यक्ष महोदय, हम आज जिस विषय पर विचार-विमर्श कर रहे हैं वह एक आधारभूत विषय है तथा उसका महत्त्व बहुत है। हम मूलाधिकारों पर विचार कर रहे हैं। हमने इस विषय पर इस प्रकार विचार किया है कि साधारणतया भारत के सभी लोगों को तथा विशेषतया विभिन्न वर्गों और सम्प्रदायों के लोगों को यह आश्वासन मिले कि राज्य उनके मूलभूत अधिकारों की पूर्णतया रक्षा करेगा। किसी सम्प्रदाय के सबसे महत्त्वपूर्ण अधिकारों में एक अधिकार भाषा और संस्कृति का अधिकार भी है। इसलिये मुझे यह देखकर कोई आश्चर्य नहीं हुआ कि अनुच्छेद 23 पर बहुत समय तक विचार-विमर्श होता रहा। इस अनुच्छेद में यह प्रावहित है कि जिन अल्पसंख्यक-वर्गों की अपनी विशेष भाषा, लिपि और संस्कृति है उन्हें इनको सुरक्षित रखने का अधिकार है। परन्तु यह स्पष्ट नहीं है कि यदि अल्पसंख्यक-वर्गों के पर्याप्त विद्यार्थियों के माता-पिता यह मांग करें कि उनके बच्चों को उन्हीं की भाषा में शिक्षा दी जाये तो क्या सरकार द्वारा चलाये हुए प्राथमिक स्कूलों में अल्पसंख्यकों की भाषा तथा लिपि को सिखाया जायेगा?

श्रीमान्, यह एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण विषय है। पूर्वी यूरोप के इतिहास से जो लोग परिचित हैं वे जानते हैं कि अल्पसंख्यकों की इस विषय-सम्बन्धी मांगों को ठुकराने से वहां कैसा संघर्ष हुआ। राष्ट्र-संघ को भी जिन महत्त्वपूर्ण समस्याओं की ओर ध्यान देना पड़ा उनमें एक यह भी थी कि अल्पसंख्यकों के सामान्य अधिकारों की ही रक्षा न की जाये, परन्तु जिन क्षेत्रों में वे वहां की जनसंख्या को देखते हुए पर्याप्त संख्या में हैं वहां उन्हें अपनी ही भाषा को प्रयोग करने का अधिकार दिया जाये। मि. लारी द्वारा उपस्थित तथा मि. करीमुद्दीन द्वारा संशोधन-प्रस्ताव

[पंडित हृदयनाथ कुंजरू]

वास्तव में सभा द्वारा सहानुभूतिपूर्वक तथा गंभीरतापूर्वक विचार करने योग्य है। यद्यपि यह मुस्लिम सम्प्रदाय के हितों की रक्षा के लिए उपस्थित किया गया है परन्तु इससे सभी अल्पसंख्यक सम्प्रदायों की रक्षा होगी। केवल भारत ही एक ऐसा देश नहीं है जहां विभिन्न भाषाएं बोली जाती हैं; अन्य देशों में भी अनेक भाषाएं बोली जाती हैं। इस सम्बन्ध में रूस का उदाहरण उल्लेखनीय है। जिन प्रदेशों पर रूसी सरकार का शासन है उनके लिये एक राष्ट्रभाषा है और वह है रूसी भाषा। परन्तु साथ ही स्थानीय भाषाओं के विकास के लिये प्रोत्साहन दिया जाता है और स्थानीय संप्रदायों की संस्कृति को उत्कृष्ट बनाने के लिए यथा-सम्भव प्रयत्न किया जाता हैं। रूस इस दिशा में बहुत आगे बढ़ा है और उसने अपने शासन के अधीन जिन सम्प्रदायों की अपनी लिपियां भी न थीं उनको लिपियां प्रदान की हैं। इस प्रकार अपने अधीन सभी सम्प्रदायों को उसने वह आश्वासन दिया है कि यह उन्हें उन सब विशिष्ट बातों के सम्बन्ध में पूर्ण संरक्षण देने के लिये तैयार है जिनको वे मूल्यवान समझते हैं, जिन पर वे अपने इतिहास तथा अपनी समुन्नति की दृष्टि से गर्व करते हैं और जिनके कारण वे यह अनुभव करते हैं कि वे अन्य सम्प्रदायों से ही सुविधाएं प्राप्त नहीं करते रहे हैं बल्कि उनके सम्मुख भी कोई मूल्यवान बातें रखते रहे हैं। यदि आज हमारे मुसलमान मित्र इन्हीं भावनाओं से प्रेरित होकर यह मांग करते हैं कि उनके बच्चों को ऐसे प्राथमिक विद्यालयों में, जहां वे पर्याप्त संख्या में हों, उनकी ही भाषा और लिपि में शिक्षा दी जाये तो यह कोई अनर्गल मांग नहीं कही जा सकती। यह एक ऐसी मांग है कि यदि हम न्याय करना चाहें तो हमें इसे पूरा करना चाहिये।

***पंडित ठाकुरदास भार्गवः** इस मांग का विरोध कौन कर रहा है?

***पंडित हृदयनाथ कुंजरूः** जो उत्तेजनापूर्ण वाद-विवाद हुआ है उसे ध्यान में रखते हुये तथा यह न समझ सकने के कारण कि संशोधन स्वीकार किया जायेगा अथवा नहीं, मैंने यह आवश्यक समझा कि मैं इस सभा के सम्मुख अपने विचार रख दूं। यदि मेरे मित्र पंडित ठाकुरदास भार्गव सभा की भावना ठीक-ठीक समझ पाये हैं तो इससे सबसे अधिक प्रसन्नता मुझ ही को होगी।

***पंडित ठाकुरदास भार्गव:** माननीय पंडित गोविन्दबल्लभ पंत ने अपने भाषण में इस सिद्धान्त को स्वीकार किया है।

***पंडित हृदयनाथ कुंजरू:** पंडित गोविन्दबल्लभ पंत जिस समय बोल रहे थे उस समय मैं सभा में उपस्थित न था परन्तु मुझे यह सूचना मिली है कि मि. लारी द्वारा उपस्थित तथा काज़ी करीमुद्दीन द्वारा संशोधित संशोधन को पंडित पंत अथवा डॉ. अम्बेडकर ने स्वीकार नहीं किया है।

***पंडित ठाकुरदास भार्गव:** उसे इस कारण स्वीकार नहीं किया गया है कि वह न्याय्य नहीं है, क्योंकि प्राथमिक शिक्षा का अधिकार ही इस समय न्याय्य नहीं है।

***पंडित हृदयनाथ कुंजरू:** श्रीमान्, अब मेरे माननीय मित्र पं. ठाकुरदास भार्गव ने अपना तर्क बदल दिया है। वे यह कहते हैं कि संशोधन इस कारण स्वीकार नहीं किया गया है कि यह अधिकार न्याय्य नहीं है। क्या इसका अर्थ यह है कि अनुच्छेद 23 पर मि. लारी ने जिस प्रकार का संशोधन उपस्थित किया है उसका वे भी विरोध करेंगे? यदि यह बात है तो उन्होंने प्रश्न ही क्यों किया? उन्होंने खड़े होकर यह क्यों कहा कि इस संशोधन का विरोध कौन कर रहा है?

***उपाध्यक्ष:** मुझे खेद है कि मैंने पहली बार विघ्न पड़ने दिया। उससे कठिनाई उत्पन्न होती जा रही है।

***पंडित हृदयनाथ कुंजरू:** श्रीमान्, मैं इसके लिये कृतज्ञ हूं कि आपने उसे पड़ने दिया क्योंकि उससे मैं अपनी स्थिति का स्पष्टीकरण कर सका हूं और यह समझ सका हूं कि मेरे माननीय मित्र पंडित ठाकुरदास भार्गव के विचार क्या हैं। यदि अनुच्छेद 23 में सभा मि. लारी के संशोधन को केवल इस कारण प्रविष्ट नहीं करना चाहती है कि वह न्याय्य नहीं है तो क्या सरकार यह आश्वासन देगी कि यह संशोधन राज्य की नीति के निदेशक सिद्धान्तों के अध्याय का अंग बना लिया जायेगा?

***एक माननीय सदस्य:** यहां कोई सरकार नहीं है।

***पंडित हृदयनाथ कुंजरू:** आखिर मसौदा-समिति के सभापति डॉक्टर अम्बेडकर भारत सरकार के कानून मंत्री तो हैं ही।

***उपाध्यक्ष:** यह एक आकस्मिक बात है।

***पंडित हृदयनाथ कुंजरू:** यदि वे यह कहने के लिये तैयार हैं कि इस संशोधन के सिद्धान्त को भाग 4 में समाविष्ट कर लिया जायेगा तो कम से कम मुझे संतोष हो जायेगा। अब मेरे मित्र पंडित ठाकुरदास भार्गव को यह स्पष्ट हो गया होगा कि जो व्यक्ति भाषा, लिपि और संस्कृति के सम्बन्ध में पूर्ण सहिष्णुता दिखाने के पक्ष में है उसके लिये यह आवश्यक है कि वह सभा के सम्मुख आये और अपना मत प्रकट करे। मुझे खेद है कि अपने कई मित्रों के विघ्न डालने से मुझे यह अनुभव होता है कि सभा की भावना मि. लारी के संशोधन के प्रतिकूल है। सच पूछिये तो, श्रीमान्, मेरी समझ में नहीं आता कि जो सदस्य अल्पसंख्यक-वर्गों के सभी अधिकारों का समर्थन करते हैं वे मुस्लिम संप्रदाय की ओर से मि. लारी द्वारा उपस्थित मांग का कैसे विरोध कर रहे हैं। उनके संशोधन को बहुत विस्तृत समझा जा सकता था क्योंकि उसे स्वीकार करने पर यदि किसी स्कूल में एक विद्यार्थी भी उर्दू सीखना चाहता तो मुस्लिम सम्प्रदाय यह मांग कर सकता था कि वहां उर्दू पढ़ाई जाये। परन्तु मि. करीमुद्दीन के संशोधन से इस भय का निराकरण हो गया है और मेरी समझ से मि. लारी ने उसे स्वीकार कर लिया है।

***श्री ज़ैड. एच. लारी:** जी हां।

***पंडित हृदयनाथ कुंजरू:** इसलिये यह स्पष्ट है कि मि. लारी ने जिस अधिकार की मांग की है उसे मुस्लिम सम्प्रदाय केवल उसी जगह प्रयोग में ला सकेगा जहां पर्याप्त संख्या में मुसलमान विद्यार्थियों को उर्दू की शिक्षा से लाभ हो सकता हो। मैं सभा से पूछता हूं कि क्या वह न्याय और सहिष्णुता की दृष्टि से किसी कारण भी इस तर्कपूर्ण मांग को ठुकरा सकती है? इससे सारे भारत के लिये एक राष्ट्रभाषा निश्चित करने में कोई बाधा नहीं पड़ती है। (**माननीय**

सदस्यः पड़ती है, पड़ती है।) बिल्कुल नहीं पड़ती है। यदि मेरे माननीय मित्र निरुद्विग्न होकर पूर्वी यूरोप और रूस के इतिहास को पढ़ें (**माननीय सदस्यः** भारत का इतिहास क्यों न पढ़े?) तो उनको ज्ञात होगा कि उनका भय निराधार है केवल उन देशों में अल्पसंख्यकों के असंतोष से संकट उपस्थित हुआ है जहां उनकी संस्कृति के संरक्षण तथा समुन्नति के सम्बन्ध में उनकी न्यायपूर्ण मांगें ठुकरा दी गई हैं। साथ ही उन देशों में, यहां इस सम्बन्ध में उनके साथ न्यायोचित व्यवहार किया गया है, राजनैतिक क्षेत्र में भी उनका पूर्ण सहयोग उपलब्ध रहा है। मैं अपने देशवासियों से यह कहता हूं कि वे इन उदाहरणों से लाभ उठायें और पूर्वी यूरोप के इतिहास से चेतावनी ग्रहण करें। पूर्वी यूरोप में पहले की अपेक्षा कुछ अधिक शान्ति तभी स्थापित हो सकी जब अल्पसंख्यकों की संस्कृति तथा भाषा की रक्षा के लिये परिस्थिति के अनुसार राष्ट्र-संघ ने यथासम्भव हस्तक्षेप किया। क्या हम इस इतिहास की अपेक्षा करके राष्ट्रान्ध होकर उसी संकटापन्न मार्ग का अवलम्बन करना चाहते हैं जिसका अवलम्बन पूर्वी यूरोप के बहुसंख्यक कई वर्षों तक करते रहे? एक माननीय सदस्य मुझसे पूछते हैं कि दूसरा विश्वयुद्ध क्यों हुआ। मैंने यह कभी नहीं कहा है कि संसार में संघर्ष का केवल एक ही कारण रहा है। पहले कई कारणों से युद्ध हुए हैं और उनसे इस समय भी संसार के राष्ट्र एक-दूसरे से विमुख हैं। परन्तु क्या इसका अर्थ यह है कि हम बिना विचार इन कारणों को बढ़ाते जायें और अल्पसंख्यकों को केवल इस कारण साधारण न्याय से वंचित रखे कि हम जैसा भी कानून चाहे उसे बनाने के लिये शक्तिसम्पन्न हैं? इस कारण भी कि हम शक्तिसम्पन्न हैं हमें विचार करना चाहिये और आगे बढ़कर अल्पसंख्यकों के प्रति उदारता दिखानी चाहिये। मेरे मित्रों, में सच्चे हृदय से आपसे प्रार्थना करता हूं, भारत माता के एक विनम्र सेवक के नाते तथा आपके एक सच्चे हितचिंतक के नाते भी आपसे प्रार्थना करता हूं कि मि. लारी के तर्कपूर्ण संशोधन को अस्वीकार करने के पहले आप उस पर गंभीरतापूर्वक विचार करें। उसमें आवश्यकता से अधिक और कुछ नहीं कहा गया है और यदि हम बहुसंख्यक होने के कारण उसे बलपूर्वक ठुकरा देंगें तो हम बहुत बड़ी गलती करेंगे। मुझे आशा है कि यह सभा विचार-विमर्श से उद्‌भुत-उत्तेजना की उपेक्षा करके इस विषय पर अनुद्विग्न होकर विचार करेगी और न्याय, सहिष्णुता तथा उदारता के विचार से मि. लारी के संशोधन को स्वीकार कर लेगी।

***उपाध्यक्ष:** डॉ. अम्बेडकर।

***प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना** (संयुक्तप्रान्त: जनरल): श्रीमान्, मुझे कुछ कहना है और...

***उपाध्यक्ष:** मैं बहस को अब अधिक बढ़ाने की आज्ञा नहीं दे सकता और इस सम्बन्ध में मेरा निर्णय अन्तिम है।

***प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना:** कुछ लोगों को बोलने देना और कुछ लोगों को न बोलने देना उचित नहीं है।

***उपाध्यक्ष:** मैं यह जानता हूं कि यह अनुचित समझा जाता है। डॉ. अम्बेडकर।

***माननीय डॉक्टर बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, अनुच्छेद 23 के सम्बन्ध में जो संशोधन उपस्थित किये गये हैं उनमें से मैं पंडित ठाकुरदास भार्गव द्वारा संशोधन संख्या 687 पर संशोधन संख्या 26 को स्वीकार कर सकता हूं। मैं संशोधन संख्या 690 पर संशोधन संख्या 31 को भी, जिसे भी पंडित ठाकुरदास भार्गव ने उपस्थित किया है, स्वीकार कर सकता हूं। अन्य जो संशोधन उपस्थित किये गये हैं उनमें से मुझे केवल दो के सम्बन्ध में, अर्थात् मि. लारी द्वारा उपस्थित संशोधन संख्या 676 और मि. लारी ही द्वारा उपस्थित संशोधन संख्या 714 के सम्बन्ध में उत्तर देने की आवश्यकता है। मेरे विचार से यह उचित होगा कि इन संशोधनों के सम्बन्ध में जो प्रश्न उठाये गये हैं उनका मैं पृथक्-पृथक् रूप से उत्तर दूं।

संशोधन संख्या 676 अल्पसंख्यकों के सांस्कृतिक अधिकारों के सम्बन्ध में है और संशोधन संख्या 714 से यह प्रश्न उठता है कि क्या विधान में मूलाधिकार के रूप में यह प्रावधान भी समाविष्ट न कर दिया जाये कि अल्पसंख्यकों को प्राथमिक अवस्था में मातृभाषा में शिक्षा ग्रहण करने का अधिकार है।

प्रथम संशोधन के सम्बन्ध में मेरे मित्र मि. लारी ने तथा मेरे मित्र मौलाना हसरत मोहानी ने भी मसौदा-समिति पर यह आरोप लगाया है कि उसने

मूलाधिकारों के सम्बन्ध में इस सभा द्वारा स्वीकृत पहले के प्रावधान को बदल दिया है। यह सच है कि मसौदा-समिति ने मूलाधिकार सम्बन्धी समिति द्वारा प्रस्तुत पैरा 18 की भाषा को बदल दिया है, परन्तु मुझे यह कहते हुए कुछ संकोच नहीं होता कि मसौदा-समिति ने पर्याप्त कारणों से ही उसकी भाषा में बदलाव किया है।

सभा से मैं पहले यह निवेदन करना चाहता हूं कि मसौदा-समिति ने मूलाधिकारों के पैरा 18 की भाषा को बदलना क्यों आवश्यक समझा। प्रारम्भिक मूलाधिकारों के पैरा को पढ़ने से यह ज्ञात होगा कि उसमें 'अल्पसंख्यक' शब्द उस विशिष्ट अर्थ में प्रयुक्त नहीं है जैसे कि हम उसका राजनैतिक संरक्षणों के अर्थ में प्रयोग करते हैं, जैसे विधान-मंडल में प्रतिनिधित्व, नौकरियों में प्रतिनिधित्व आदि के सम्बन्ध में। यह शब्द केवल विशिष्ट अर्थ में अल्पसंख्यकों का बोध कराने के लिये प्रयोग में नहीं आता, परन्तु उससे ऐसे अल्पसंख्यकों का भी बोध होता है तो विशिष्ट अर्थ में वास्तव में अल्पसंख्यक नहीं हैं परन्तु संस्कृति तथा भाषा की दृष्टि से अवश्य अल्पसंख्यक हैं। उदाहरणार्थ, अनुच्छेद 23 के प्रसंग में, यदि मद्रास से कुछ लोग जाकर कुछ काम के लिये बम्बई में बस जायें तो वे यद्यपि विशिष्ट अर्थ में अल्पसंख्यक नहीं हैं परन्तु सांस्कृतिक दृष्टि से वे अल्पसंख्यक समझे जायेंगे। इसी प्रकार यदि कुछ महाराष्ट्री महाराष्ट्र से जाकर बंगाल में बस जायें तो यद्यपि वे विशिष्ट अर्थ में अल्पसंख्यक नहीं हैं परन्तु संस्कृति और भाषा की दृष्टि से वे बंगाल में अल्पसंख्यक समझे जायेंगे। संस्कृति, भाषा और लिपि के सम्बन्ध में यह अनुच्छेद अल्पसंख्यकों को केवल विशिष्ट अर्थ में ही संरक्षण प्रदान नहीं करता पर उस विस्तृत अर्थ में भी प्रदान करता है जिसकी ओर मैंने अभी संकेत किया है। इसी कारण हमने 'अल्पसंख्यक' शब्द को निकाल दिया, क्योंकि हमने यह विचार किया कि इस शब्द की संकुचित व्याख्या हो सकती है, यद्यपि इस सभा ने 'अल्पसंख्यक' शब्द को अनुच्छेद 18 को स्वीकार करते समय उसके विस्तृत अर्थ में उसे स्वीकार किया है ताकि संस्कृति के सम्बन्ध में उन लोगों को जो विशिष्ट अर्थ में तो अल्पसंख्यक नहीं हैं पर वास्तव में अल्पसंख्यक हैं, संरक्षण प्राप्त हो सकें। यह अनुभव किया गया कि यह संरक्षण इस सामान्य कारण से आवश्यक है कि जो लोग एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त में जाते हैं और वहां बस जाते हैं वे वहां स्थायी रूप से नहीं बसते। वे जिस प्रान्त से जाते हैं उससे सम्बन्ध-विच्छेद नहीं करते बल्कि अपने सम्बन्धों

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

को बनाये रखते हैं। विवाह के लिये वे अपने ही प्रान्त जाते हैं। अन्य कई बातों के लिये भी वे अपने प्रान्त जाते हैं और यदि स्थानीय विधान-मंडल के अधीन रहते हुए उन्हें यह संरक्षण प्राप्त न हुआ और यदि स्थानीय विधान-मंडल ने उन्हें अपनी संस्कृति के संरक्षण के अवसर से वंचित कर दिया तो इन विशिष्ट संस्कृति वाले लोगों के लिये अपने प्रान्त में जाकर अपने लोगों से मिलना-जुलना कठिन हो जायेगा। एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त में प्रवास की समस्या को हल करने के लिये हमने यह उचित समझा कि विधान में इस प्रकार का प्रावधान समाविष्ट किया जाये।

मेरे विचार से अनुच्छेद 23 को पढ़ते समय यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि इससे राज्य पर कोई कर्त्तत्व अथवा भार नहीं पड़ता है। उदाहरणार्थ, उसमें यह नहीं कहा गया है कि यदि मद्रास के लोग बंबई आयें तो बंबई की सरकार कानून के अनुसार तामिल भाषा में अथवा आंध्र भाषा में अथवा अन्य किसी भाषा में शिक्षा देने की योजना का खर्च पूरा करेगी। राज्य पर इसका कोई भार नहीं है। अनुच्छेद 23 में केवल यह प्रतिबन्ध है कि यदि विशिष्ट संस्कृति वाला कोई अल्पसंख्यक-वर्ग अपनी भाषा, लिपि तथा संस्कृति को सुरक्षित रखना चाहता है तो राज्य कानून द्वारा किसी स्थानीय अथवा अन्य संस्कृति को स्वीकार करने के लिये उसे बाध्य न करेगा। इसलिये इस अनुच्छेद का विस्तृत अर्थ लगाना चाहिये और यह न समझना चाहिये कि यह केवल उन अल्पसंख्यकों पर लागू होता है जिन्हें मैंने विशिष्ट अल्पसंख्यक कहा है और जिनका इस विधान में उल्लेख है। इसी कारण हमने 'अल्पसंख्यक' शब्द को मूल खण्ड से निकाल दिया है।

हमने 'अल्पसंख्यक' शब्द को तो निकाल दिया है परन्तु मेरे विचार से मि. लारी यह देखना भूल गये कि मूलाधिकारों के मूल अनुच्छेद में संरक्षण की जैसी व्यवस्था थी उससे अच्छी व्यवस्था हमने कर दी है। मूलाधिकारों के मूल अनुच्छेद में राज्य का केवल एक प्रकार का यह कर्त्तव्य बताया गया था कि वह उनकी संस्कृति, उनकी लिपि और भाषा की रक्षा करेगा। मूल अनुच्छेद में इन विभिन्न सम्प्रदायों को कोई मूलाधिकार नहीं दिया गया था। उसमें केवल एक कर्त्तव्य का निर्देश था और इस आशय का एक खण्ड था कि यद्यपि राज्य को इन भाषा, संस्कृति और लिपि-सम्बन्धी अधिकारों को सीमित करने का अधिकार

है परन्तु राज्य कोई ऐसा कानून नहीं बनायेगा जिसे उत्पीड़नशील कहा जा सके। इसका यह अर्थ नहीं था कि राज्य को इन विषयों के सम्बन्ध में कानून बनाने का अधिकार ही नहीं है परन्तु केवल यह अर्थ था कि यह कानून उत्पीड़नशील न होगा। मुझे इसका विश्वास है कि मूल अनुच्छेद में जिस संरक्षण की व्यवस्था थी वह बिल्कुल अपर्याप्त थी। सब कुछ राज्य की सद्भावना पर छोड़ दिया गया था। अब अनुच्छेद 23 को पढ़ने से आपको ज्ञात होगा कि हमने इसे मूलाधिकार का रूप दे दिया है जिससे यदि राज्य इस अनुच्छेद के प्रावधानों के प्रतिकूल कोई कानून बनाये तो प्रतिकूलता की सीमा तक वह कानून इस सभा द्वारा स्वीकृत अनुच्छेद 8 के अनुसार शून्य हो जायेगा।

इसलिये मेरे मित्र मि. लारी और मौलाना साहब को यह ज्ञात होना चाहिये कि उनकी दृष्टि से भी अब यह अनुच्छेद मूल अनुच्छेद से अच्छा हो गया है। मसौदा-समिति ने जो परिवर्तन किया है उससे निश्चय ही स्थिति किसी प्रकार नहीं बिगड़ी है।

अब मैं दूसरे प्रश्न को उठाता हूं, अर्थात् इस प्रश्न को कि विधान में स्पष्ट शब्दों में यह समाविष्ट करना चाहिये अथवा नहीं कि मातृभाषा में शिक्षा ग्रहण करने का अधिकार एक मूलाधिकार है। इस प्रसंग में मैं यह कहूंगा, और मेरे विचार से तर्कप्रिय लोगों का इस सम्बन्ध में कोई मतभेद न होगा, कि यदि प्राथमिक शिक्षा को लाभप्रद तथा प्रभावपूर्ण बनाना है तो उसे बच्चों की मातृभाषा में ही देना होगा। अन्यथा प्राथमिक शिक्षा का कोई मूल्य नहीं रह जायेगा और वह निरर्थक हो जायेगी। इस सम्बन्ध में मुझें विश्वास है कि कोई मत-वैषम्य नहीं है और इस मत-प्रकाश के लिये मेरे लिये यह आवश्यक नहीं है कि मैं अपनी सरकार की आज्ञा लूं। इसे सभी ने स्वीकार किया है और यह इतना तर्कपूर्ण है कि इस सिद्धान्त के सम्बन्ध में किसी प्रकार का मत-वैषम्य हो ही नहीं सकता। अब प्रश्न यह है कि हम इसे कानून में अथवा विधान में समाविष्ट करें अथवा नहीं। सच पूछिये तो विधान के किसी भी अनुच्छेद में इसे समाविष्ट करने में मुझे कुछ कठिनाई का अनुभव हो रहा है। जैसा कि मेरे माननीय मित्र पंडित कुंजरू ने कहा है, यह सच है कि इस प्रकार के मूलाधिकार को प्रभाव में लाने में जो कठिनाई होती, वह मि. करीमुद्दीन के इस संशोधन से कम हो गई है कि इस सिद्धान्त को तभी प्रभाव में लाया जाय जब इस प्रकार के विद्यार्थी पर्याप्त संख्या

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

में उपलब्ध हों। मैं अपने मित्र मि. करीमुद्दीन को यह बताना चाहता हूं कि उनके संशोधन से इस सिद्धान्त को प्रभाव में लाने में जो कठिनाई होगी वह दूर नहीं होती है। पहले इसका निश्चय कौन करेगा कि विद्यार्थियों की पर्याप्त संख्या है या नहीं? मैं एक उदाहरण दूंगा। यदि हम यह मानें कि यह प्रश्न अधिशासी-वर्ग पर छोड़ दिया जायेगा, जैसा कि किया ही जायेगा, और यदि अधिशासी-वर्ग यह नियम निर्धारित करें कि किसी स्कूल में प्राथमिक शिक्षा पाने वाले विद्यार्थियों की संख्या पर्याप्त तभी समझी जायेगी जब 49 प्रतिशत ऐसे विद्यार्थी उपस्थित हों, तो क्या अधिशासी-वर्ग को इस प्रकार का अधिकार देने से प्रस्तावक महोदय को संतोष होगा? इसके अतिरिक्त यदि आप इस विषय को न्याय्य बना दें, जैसा कि वह मूलाधिकारों में रखने से हो ही जायेगा, क्योंकि कोई भी मूलाधिकार जब तक वह न्याय्य नहीं है, मूलाधिकार ही नहीं है, तो क्या यह उचित होगा कि यह प्रश्न कि किसी स्कूल में विद्यार्थियों की पर्याप्त संख्या है अथवा नहीं, किसी न्यायालय के सम्मुख उपस्थित किया जाये और न्यायालय इस सम्बन्ध में निर्णय करे? यह कठिनाई मेरे विचार से अन्य प्रकार दूर नहीं हो सकती है। आपको 'पर्याप्त' शब्द के निर्वचन का अधिकार या तो अधिशासी-वर्ग को देना होगा या न्यायाधीश-वर्ग को, परन्तु मेरे विचार से अल्पसंख्यक इनमें से किसी उपाय से भी अपने उद्देश्य की पूर्ति आसानी से न कर सकेंगे। इसलिये मेरा यह निवेदन है कि हमें इससे संतोष कर लेना चाहिये कि यह एक सर्वस्वीकृत सिद्धान्त है और कोई भी प्रान्तीय सरकार अपने बहुत से लोगों के शिक्षा-सम्बन्धी अधिकारों को बिना हानि पहुंचाये हुए इसका तर्कपूर्ण ढंग से शून्यन नहीं कर सकती है। इसलिये मेरा सभा से यह निवेदन है कि यह अनुच्छेद संशोधित रूप में स्वीकार कर लिया जाये।

*__उपाध्यक्ष:__ प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 23 के स्थान में निम्नलिखित अनुच्छेद रखा जाये:

'23. Without detriment to the spiritual heritage and the cultural unity of the country, which the State shall recognise, protect and nourish, any section of the citizens residing in the territory of India or any part thereof, claiming to have a distinct language, script and culture shall be free to conserve the same."

(23. देश की आध्यात्मिक परम्परा तथा सांस्कृतिक एकता का उल्लंघन न करते हुए, जिन्हें राज्य स्वीकार करेगा और जिनका रक्षण तथा पोषण करेगा। भारत के राज्य-क्षेत्र में अथवा उसके किसी भाग में निवास करने वाले नागरिकों के किसी वर्ग को, जिसका यह दावा हो कि उसकी विशेष भाषा, लिपि और संस्कृति है, इसकी स्वतंत्रता होगी कि वह उनका संरक्षण करे।)

प्रस्ताव गिर गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 23 के स्थान में निम्नलिखित रखा जाये:

'(1) Minorities in every Unit shall be protected in respect of their language, script and culture, and no laws or regulations may be enacted that may operate oppressively or prejudicially in this respect.' "

[(1) प्रत्येक प्रदेश में भाषा, लिपि और संस्कृति के सम्बन्ध में अल्पसंख्यकों की रक्षा की जायेगी और कोई ऐसे कानून अथवा आनियम न बनाये जायेंगे जिनसे इस सम्बन्ध में उत्पीड़न हो अथवा जिनसे विपरीत प्रभाव पड़े।]

प्रस्ताव गिर गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 23 के खण्ड (1) में 'script and culture' (लिपि और संस्कृति) शब्दों के स्थान में 'script or culture' (लिपि अथवा संस्कृति) शब्द रखे जायें।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 678 के सम्बन्ध में अनुच्छेद 23 के खण्ड (1) में 'residing in the territory of India or any part thereof' (भारत के राज्य-क्षेत्र अथवा उसके किसी भाग के निवासी) शब्दों के स्थान में 'residing in any part of the territory of India' (भारत के राज्य-क्षेत्र के किसी भाग के निवासी) शब्द रखे जायें।"

प्रस्ताव गिर गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 23 के खण्ड (1) में 'conserve' (समारक्षण) शब्द के बाद 'develop' (समुन्नत करने) शब्द रखे जायें।"

प्रस्ताव गिर गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 23 के खण्ड (3) में जहां कहीं 'community' (सम्प्रदाय) शब्द आया है उसे निकाल दिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 23 के खण्ड (2) के स्थान में निम्नलिखित रखा जाये:

'(2) No citizen shall be denied admission into any educational institution maintained by the State or receiving aid out of State funds on grounds only of religion, race, caste, language or any of them."

[(2) किसी नागरिक का, राज्य द्वारा संधृत अथवा राज्य-प्रणीवि से सहायता पाने वाले किसी शैक्षिक संस्था में प्रवेश, केवल धर्म, प्रजाति, जाति और भाषा के कारणों से अथवा इनमें से किसी कारण से वर्जित न किया जायेगा।]

और अनुच्छेद 23 के उपखण्ड (क) और (ख) की अनुच्छेद 23-क के रूप में पुनर्गणना की जाये।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 23 के खण्ड (3) के उपखण्ड (क) के स्थान में निम्नलिखित रखा जाये:

'(a) Linguistic minorities shall have the right to establish, manage and control educational institutions for the promotion of the study and knowledge of their language and literature, as well as for imparting

general education to their children at primary and pre-primary stage through the medium of their own languages.'"

[(क) एक-भाषा-भाषी अल्पसंख्यकों को अपनी भाषा तथा साहित्य की उन्नति तथा अध्ययन के लिये तथा अपनी भाषाओं के माध्यम द्वारा अपने बच्चों को प्राथमिक तथा पूर्व-प्राथमिक स्तरों पर सामान्य शिक्षा देने के लिये शिक्षा-संस्थाओं को स्थापित करने, उनका प्रबन्ध करने तथा उन पर नियंत्रण रखने का अधिकार होगा।]"

प्रस्ताव गिर गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 23 के खण्ड (3) के उपखण्ड (क) के साथ निम्नलिखित परादिक जोड़ दिया जाये:

'Provided that no part of the expenditure in connection with such institutions shall fall upon or be defrayed from the public purse; and provided further that no such institution, nor the education and training given therein shall be recognised, unless it complies with the courses of instruction standards of attainment, methods of education and training, equipment and other conditions laid down in the national system of education.'"

(पर प्रतिबन्ध यह है कि इस प्रकार की संस्थाओं के व्यय के किसी भाग को सार्वजनिक कोष वहन न करेगा और न उससे वह पूरा ही किया जायेगा और यह भी प्रतिबन्ध है कि इस प्रकार की कोई संस्था और उसमें दी जाने वाली शिक्षा तथा प्रशिक्षा को उस समय तक स्वीकार न किया जायेगा जब तक कि वह राष्ट्रीय शिक्षा-प्रणाली में निर्धारित शिक्षा के पाठ्यक्रम, शिक्षा के आदर्शों और शिक्षा तथा प्रशिक्षा की प्रणाली, सामग्री तथा अन्य प्रतिबन्धों के अनुरूप न हो)"

संशोधन गिर गया।

***उपाध्यक्षः** क्या माननीय सदस्य, मि. लारी, काज़ी करीमुद्दीन द्वारा उपस्थित सूची 3 के संशोधन संख्या 53 को स्वीकार करते हैं?

***श्री ज़ैड. एच. लारीः** जी हां, श्रीमान्।

***उपाध्यक्षः** क्या वे बेगम ऐज़ाज रसूल के संशोधन को भी स्वीकार करते हैं?

***श्री ज़ैड. एच. लारीः** मैं उसे स्वीकार नहीं करता।

***उपाध्यक्षः** अब मैं सभा के सम्मुख काज़ी करीमुद्दीन के संशोधन संख्या 714 को सूची 3 के संशोधन संख्या 53 द्वारा संशोधित रूप में रखूंगा।

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी** (आसाम : जनरल): श्रीमान्, मुझे यह औचित्य-प्रश्न करना है कि क्या किसी संशोधन के प्रस्तावक के अनुपस्थित रहने पर उनके संशोधन पर मत लिया जा सकता है?

***उपाध्यक्षः** क्या श्री चौधरी निश्चित रूप से जानते हैं कि काज़ी करीमुद्दीन के सभा में अनुपस्थित रहने से उनके संशोधन पर मत लिया ही नहीं जा सकता?

***श्री रोहिणी कुमार चौधरीः** जी नहीं, चूंकि मि. लारी ने उसे स्वीकार किया है और वे सभा में उपस्थित हैं तथा उनके संशोधन पर मत लिया जा रहा है।

***उपाध्यक्षः** अब मैं प्रस्ताव पर मत लूंगा।

***पंडित ठाकुरदास भार्गवः** इसके पूर्व कि आप मत लें, मैं एक औचित्य प्रश्न करना चाहता हूं। मेरी तुच्छ सम्मति में इस संशोधन संख्या 714 का विषय न्याय्य नहीं हो सकता क्योंकि हमने प्राथमिक शिक्षा के अधिकार को ही न्याय्य नहीं बनाया है। इसलिये यह संशोधन व्यवस्था के विरुद्ध है। जब प्राथमिक शिक्षा का अधिकार ही न्याय्य नहीं है और वह किसी न्यायालय के सम्मुख जाकर प्रयोग में नहीं लाया जा सकता तो इस आनुषंगिक अधिकार को न्याय्य नहीं बनाया जा सकता और इसलिये इस संशोधन को सभा के सम्मुख नहीं रखा जा सकता। यह व्यवस्था के विरुद्ध है और कोई भी मूलाधिकार इस पर आधृत नहीं किया जा सकता।

***श्री एल. कृष्णास्वामी भारती** (मद्रास : जनरल): अब इस औचित्य प्रश्न को उठाने का समय नहीं रह गया है।

***उपाध्यक्ष:** मैं भी यही कहने जा रहा था कि अब इस प्रकार की आपत्ति करने का समय नहीं रह गया है।

***पंडित ठाकुरदास भार्गव:** मैंने पहले, जब पंडित कुंजरू बोल रहे थे, तो उस समय भी यह आपत्ति की थी।

***उपाध्यक्ष:** मैं अब इस संशोधन पर मत लूंगा। प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 23 के खण्ड (3) के बाद निम्नलिखित नया खण्ड प्रविष्ट किया जाये:

'(4) Any section of the citizens residing in the territory of India or any part thereof having a distinct language and script shall be entitled to have primary education imparted to its children through the medium of that language and script in case of substantial number of such students being available.' "

[(4) भारत के राज्य-क्षेत्र अथवा उसके किसी भाग के निवासी किसी अल्पसंख्यक-वर्ग को, जिसकी विशेष भाषा और लिपि हो, अपने बच्चों को, यदि इस प्रकार के विद्यार्थी पर्याप्त संख्या में हों तो, उस भाषा और लिपि के माध्यम द्वारा प्राथमिक शिक्षा दिलाने का अधिकार होगा।]

प्रस्ताव गिर गया।

***मौलाना हसरत मोहानी:** मैं मत-विभाजन की मांग करता हूं।

***उपाध्यक्ष:** मैं मत-विभाजन की आज्ञा नहीं दे सकता क्योंकि ध्वनियां स्पष्ट और निर्णायक हैं। मैं चाहता हूं कि माननीय सदस्य कोई ऐसी बात न करें जिससे कि सभा का समय नष्ट हो। मुझे खेद है कि मेरी न्यायोचित प्रार्थना स्वीकार नहीं की गई है।

***श्री महबूब अली बेग साहब** (मद्रास : मुस्लिम): श्रीमान्, क्या मैं इस अवसर पर बोल सकता हूं?

***उपाध्यक्ष:** अब उसके लिये समय नहीं रह गया है।

अब बेगम ऐज़ाज़ रसूल के संशोधन पर मत लेने के पहले मैं उसे पढ़ूंगा क्योंकि वह सदस्यों के पास नहीं भेजा गया था। वह इस प्रकार है, मि. लारी द्वारा उपस्थित संशोधन संख्या 714 में 'section of the citizens' (नागरिकों के किसी वर्ग) शब्दों के स्थान में 'minority' (किसी अल्पसंख्यक-वर्ग) शब्द रखे जायें।

"प्रस्ताव यह है कि यह संशोधन स्वीकार कर लिया जाये।"

प्रस्ताव गिर गया।

***उपाध्यक्ष:** अब मैं संशोधित रूप में अनुच्छेद पर मत लूंगा।

***पंडित हृदयनाथ कुंजरू:** मुझे खेद है कि मैं कार्यवाही में विघ्न डाल रहा हूं। यदि सभा के कुछ सदस्य यह जानने के लिये कि कितने लोग मि. लारी के संशोधन के पक्ष में हैं और कितने उसके विरोध में हैं; इस प्रस्ताव पर मतविभाजन चाहते हैं तो मेरे विचार से यदि आप इस प्रार्थना को स्वीकार कर लें तो इससे सभा का समय नष्ट न होगा। केवल हाथ उठाने से ही यह पता लग सकता है कि कितने लोग किस पक्ष में है।

***उपाध्यक्ष:** यदि सदस्य पर्याप्त संख्या में यह मांग करें तो यह किया जा सकता है। परन्तु मैं आपसे यह कहना चाहता हूं कि सभा में सद्भाव बनाये रखना अच्छा ही होता है। परन्तु वह इस प्रकार नहीं बना रह सकता। मैं आपसे फिर कहता हूं कि आप मेरे सुझाव पर विचार करें। जहां तक हो सका है मैंने प्रत्येक अल्पसंख्यक-वर्ग को यथासम्भव प्रत्येक सुविधा दी है और वास्तव में इतना समय दिया है कि मैंने कभी बहुसंख्यक-वर्ग को जानबूझ कर अल्पसंख्यक-वर्ग में परिणत कर दिया है। मैं हृदय से यह चाहता हूं कि मैं जो कुछ कह रहा हूं उसे अल्पसंख्यक-वर्ग स्वीकार करें। मैं उनसे प्रार्थना करता हूं कि वे मेरे साथ

इस प्रकार भी सहयोग करें। यदि वे नहीं करना चाहते तो मैं उनकी प्रार्थना स्वीकार करने के लिये तैयार हूं आपका निर्णय क्या है?

***माननीय सदस्यः** जी हां।

***उपाध्यक्षः** अब मैं संशोधित रूप में इस अनुच्छेद पर मत लूंगा। प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 23 संशोधित रूप में, विधान का अंग बना लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 23, संशोधित रूप में, विधान का अंग बना लिया गया।

***उपाध्यक्षः** सज्जनों, धन्यवाद। अब सभा बृहस्पतिवार, 9 दिसम्बर सन् 1948 ई. के प्रातः दस बजे तक के लिये स्थगित की जाती है।

इसके पश्चात् सभा बृहस्पतिवार, 9 दिसम्बर सन् 1948 ई. के प्रातः दस बजे तक के लिये स्थगित हो गई।